theaiyasamaj.org

ओ३म्

# आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 20 अप्रैल 2014 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 20 अप्रैल 2014 से 26 अप्रैल 2014

बै.कृ. 05 ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 104, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

## डी.ए.वी. महिला महाविद्यालय कोसली, में हुआ दीक्षान्त एवं वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह

डी.ए.वी. महिला महाविद्यालय, कोसली रेवाड़ी में दीक्षान्त समारोह एवं वार्षिक पुरस्कार वितरण समरोह का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक के उपकुलपति श्री एच.एस.चहल मुख्य अतिथि एवं सेवानिवृत्त एस. डी.एम इन्द्र सिंह बोहरा व दडौली आश्रम के संचालक स्वामी शरणांनंद महाराज विशिष्ट अतिथि थे। समारोह में एक सौ स्नातक छात्रों को डिग्री प्रदान की गई तथा विभिन्न गतिविधियों में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाली छात्राओं को पुरस्कृत किया। बी.ए. तृतीय वर्ष की छात्रा अनु को सर्वश्रेष्ठ छात्रा का खिताब मिला।

मुख्यातिथि उपकुलपति एच.एस. चहल ने नारी–शिक्षा के महत्त्व को रेखांकित करते हुए कहा कि आज के युग में नारी शिक्षा के बिना विकास की कल्पना नहीं की जा सकती। उन्होंने कहा कि हमारी बेटियाँ धीरे–धीरे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में आगे बढ़ रही हैं तथा नागरिक सेवाओं, रक्षा व प्रतिरक्षा , खेलकूद एवं प्रबंधन में नए–नए कीर्तिमान स्थापित कर रही हैं। श्री इंद्र सिंह बोहरा ने छात्राओं से डी.ए.वी. एवं आर्य समाज के उच्च नैतिक आदर्शों को अपनाने व उच्च चरित्र–निर्माण करने का आह्वान किया और कहा कि चरित्रवान एवं सुसंस्कृत व्यक्ति ही भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की रक्षा कर सकते है। कालेज प्राचार्य डॉ. जय सिंह ने कॉलेज की वार्षिक रिर्पोट प्रस्तुत की एवं आये हुए अतिथियों का स्वागतः आभार एवं धन्यवाद व्यक्त किया।

## अर्जुनदेव चढ्डा आर्य कर्मवीर उपाधि से सम्मानित

### हरिद्वार में भव्य समारोह में हुआ सम्मान

कोटा आर्य समाज के जिला प्रधान व प्रतिष्ठित समाज सेवी अर्जुनदेव चढ्डा को हरिद्वार ज्वालापुर स्थित वानप्रस्थ आश्रम में आयोजित समारोह में स्वामी आत्मबोध सरस्वती ने कर्मवीर पुरस्कार से सम्मानित किया गया। माता लीलावती आर्य भिक्षु परोपकारिणी न्यास हरिद्वार द्वारा आयोजित कार्यक्रम के अध्यक्ष स्वामी दिव्यानंद सरस्वती ने अर्जुनदेव चढ्डा को शाल ओढ़ाकर व न्यास के अध्यक्ष गिरधारी लाल चंदवानी ने स्मृति चिन्ह व श्रीनिवास ने श्रीफल भेंट कर सम्मानित किया गया।

उत्तराखंड आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान सत्यप्रकाश गुप्त मंच पर अभिनंदन पत्र पढ़कर सभी को सुनाया।

अर्जुनदेव चढ्डा ओर से पदाधिकारियों द्वारा 11 हजार रुपये की नकद राशि भी भेंट स्वरूप प्रदान की गई।

न्यास के मंत्री देवराज आर्य ने बताया कि इस कार्यक्रम में आर्य विद्वान् धर्माचार्य विश्वमित्र, मेघवी श्री गुरुजी (विदिशा) को स्वामी धर्मानंद विद्या मार्तंड आर्य भिक्षु पुरस्कार, आर्य ब्रह्मचारी आचार्य कोमल कुमार (गुरूकुल आश्रम आम सेना, ओड़िसा) को ब्रह्मचारी अखिलानंद आर्य भिक्षु पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

समारोह में गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पूर्व कुलसचिव प्रो. जयदेव विद्याअलंकार, गिरधारी लाल चांदवानी, देवराज आर्य, माता रुकमणी आर्य, आदि पुरूष व विद्वान उपस्थित थे। कार्यक्रम का प्रारंभ देव यज्ञ से हुआ तथा समापन शांति पाठ के साथ हुआ।

## कादियाँ में मनाया गया आर्य समाज का स्थापना दिवस

डी.ए.वी. सीनियर सैकण्डरी स्कूल कादियां में आर्य समाज–स्थापना दिवस बड़े हर्षोलास से मनाया गया। वर्ष प्रतिपदा के अवसर पर विद्यालय की यज्ञशाला के पवित्र वैदिक ऋचाओं के उच्चारण के साथ यज्ञ सम्पन्न हुआ। इस कार्यक्रम में विद्यालय के छात्रों ने गीत, भाषण एवं कविता प्रस्तुत किये।

अपने वक्तव्य में स्कूल प्रिंसिपल श्री अग्रेज् सिंह बोपाराय ने बताया कि आज के दिन युग प्रवर्तक महर्षि ने सन् 1875 ई में मुम्बई में आर्य समाज की स्थापना की थी। उन्होंने यह भी बताया कि आज के दिन हमारे स्वदेशी विक्रमी नव वर्ष का शुभारम्भ होता है। उन्होंने स्कूल स्टाफ एवं बच्चों को आर्य समाज स्थापना दिवस और नव विक्रमी वर्ष की बधाई भी दी।

इस मौके पर श्री सतीश कुमार, रविन्द्र शर्मा मंगा राम, जोगिन्द्र शास्त्री रमन कान्ता, अन्य स्टाफ, सदस्य तथा विद्यार्थी मौजूद थे। यज्ञ के अन्त में प्रसाद वितरित किया गया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ७

संपादक – श्री पूनम सूरी

thearyasamaj.org



ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 20 अप्रैल, 2014 से 26 अप्रैल, 2014

# जीवन-यज्ञ अविच्छिन्न रहे

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

**घृतस्य जूतिः समना सदेवा, संवत्सरं हविषा वर्धयन्ती।**
**श्रोत्रं चक्षुः प्राणोऽच्छिन्नो नो अस्तु, अच्छिन्ना वयमायुषो वर्चसः।।**

अथर्व 16.58.1

ऋषिः **ब्रह्मा**। देवता **यज्ञः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● **(घृतस्य)** आत्मतेज–रूप घृत की **(जूतिः)** वेगवती धारा **(समना)** मन–सहित [और] **(सदेवा)** इन्द्रियों–सहित **(संवत्सरं)** शत–संवत्सर जीवन –यज्ञ को **(हविषा)** हवि से **(वर्धयन्ती)** बढ़ाती [रहे]। **(नः)** हमारा **(श्रोत्रं)** श्रोत्र, **(चक्षुः)** नेत्र [और] **(प्राणः)** प्राण **(अच्छिन्नः अस्तु)** अच्छिन्न रहे। **(वयं)** हम **(आयुष)** आयु से [तथा] **(वर्चसः)** वर्चस्विता से **(अच्छिन्नाः)** अच्छिन्न [रहें]।

● मनुष्य का जीवन सौ या सौ से भी अधिक वर्ष तक चलनेवाला एक यज्ञ है, जिसे 'शत–संवत्सर यज्ञ' भी कहा है जाता है। हम चाहते हैं कि हमारा यह यज्ञ निर्विघ्न चलता रहे। जैसे बाह्य यज्ञ तभी प्रवृत्त रह सकता है, जब उसमें यजमान और ऋत्विजों द्वारा निरन्तर हवि की आहुति पड़ती हे, वैसे ही हमारे इस शरीर यज्ञ के निर्बाध चलते रहने के लिए भी यह आवश्यक है कि इसका यजमान और इसके ऋत्विज् इसे हवि द्वारा बढ़ाते रहें। आत्मा ही इस का 'यजमान' है, मन 'ब्रह्म' है, प्राण 'उद्गाता' है, वाणी 'होता' है चक्षु 'अध्वर्यू' है। अतः आत्मा की आत्म–तेज–रूप घृत की आहुति, मन की प्रबल संकल्प की आहुति और सब ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रयों की अपनी–अपनी ज्ञान–कर्म–रूप हवियों की आहुति हमारे इस 'शत–संवत्सर' जीवन–यज्ञ में पड़ती रहनी चाहिए। यदि आत्मा, मन और इन्द्रिय–देव इस यज्ञ में सहायक नहीं होंगे, तो हमारा यह जीवन–यज्ञ समय पूर्व ही विच्छिन्न हो जाएगा। अतः हमारे श्रोत्र, नेत्र, प्राण आदि की शक्तियाँ प्रअक्षुण्ण रहनी चाहिएँ, जिससे हम चिर–काल तक कानों से शब्द, नेत्रों से रूप, नासिका से गन्ध, रसना से रस, त्वचा से स्पर्श का ग्रहण कर सकें और प्राण–अपना आदि की क्रियाओं को सम्यक् प्रकार से करते रहें। यदि हमारी ये इन्द्रियाँ दुर्बल, या अशक्त हो जाती हैं तो हमारे जीवन की वही अवस्था होगी, जो ऋत्विजों के दुर्बल, अशक्त या उदासीन हो जाने पर यज्ञ की होती है। यदि आयु से तथा वर्चस्विता से अच्छिन्न रहना चाहते हैं, तो हमें अपने जीवन–यज्ञ के यजमान और ऋत्विजों को सबल, सशक्त और निरन्तर जागरूक रखना होगा।

हे मेरे आत्मन्! हे मन! हे प्राण! हे इन्द्रिय–देवो! तुम जागते रहो, जीवन–यज्ञ में हवि डालते रहो, यज्ञ को प्रज्वलित, प्रवृद्ध, अच्छिन्न तथा वर्चस्वी बनाये रहो। ❑

**वेद मंजरी से**

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

# तत्त्व-ज्ञान

● महात्मा आनन्द स्वामी

स्वामीजी तीन प्रकार के दुःखों–आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक की बात कर रहे थे जिनसे पीड़ित जीव छुटकारा पाना चाहते हैं। भूख भी एक दुःख है जो युगों–युगों से साथ लगा हुआ है लेकिन इसकी अत्यंत निवृत्ति का कोई भौतिक साधन प्राप्त नहीं हुआ।

यह भी बताया कि दुखों की परम्परा निरंतर हमें घेरे रहती है। किसी प्रकार के दुःख की पूर्णतया निवृत्ति नहीं होती। महाभारत में तथा वेद में भी यही शिकायत है। प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या दुनिया दुःखों ही के लिए बनाई गई है? परमात्मा की ओर देखें तो उसका कोई भी कार्य ज्ञान और बुद्धि के विपरीत नहीं। उसके हर काम में पूरा विज्ञान, पूरा नियम और पूरी समझ है। चेद उपनिषद, दर्शन अन्य शास्त्र भी यही कहते हैं। और जब सब कुछ बुद्धिपूर्वक और नियमानुसार है फिर दुःख क्यों?

स्वामीजी ने बताया कि जीव ने दुःखो के सर्वथा नाश की कोशिश नहीं की केवल टालने के उपाय किए हैं। दुःखों के अत्यंत नाश का एकमात्र साधन है तत्त्व–ज्ञान। इसी संदर्भ में मिथ्या ज्ञान के नाश हेतु न्याय साँख्य और वेदांत का मत उपस्थित किया। साँख्य हो या वेदांत दोनों, एक ही परिणाम पर पहुंचे हैं कि तत्त्व–ज्ञान के बिना न बंधन से मुक्ति है, न दुःखों से छुटकारा।

अब आगे...

**जैनमत की बात**

जैनमत के महानुभावों ने दो ही तत्त्व–जीव और अजीव माने हैं। जीवों के दो भेद बतलाये हैं– संसारी और मुक्त। फिर इसका विस्तार जीव, आकाश, धर्म, अधर्म और पुद्गलास्तिकाय से भी किया गया है। प्रकारान्तर से तब जीव, अजीव, आस्रव, संवर, निर्जर, बन्ध, मोक्ष, इन सात पदार्थों का वर्णन किया गया है। दुःखों से छूटने और मुक्ति प्राप्त करने के साधन सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र ही बतलाये हैं।

**परिणाम एक ही**

निष्कर्ष यह है कि ईश्वरवादी अथवा अनीश्वरवादी सब–के–सब, एक बात पर पूर्णतया सहमत हैं कि तत्त्वज्ञान के अतिरिक्त दुःखों की अत्यन्त निवृत्ति और किसी प्रकार से नहीं हो सकती।

**वेद भगवान् का आदेश**

वेद भगवान् ने आदि सृष्टि में ही यह आदेश दे दिया था कि :

**युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविता धियः।**
**अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथ्विया ऽअध्याभरत्।।**

यजु.11।1।।

'तत्वज्ञान के लिए जब योगी अपने मन को पहले परमेश्वर में युक्त करता है, तब परमेश्वर उसकी बुद्धि को अपनी कृपा से अपने में युक्त कर लेता है। फिर वह साधक परमेश्वर के प्रकाश को अपने में धारण करता है। पृथिवी पर योगी का यह प्रसिद्ध लक्षण है।' परमात्मा के साथ युक्त हुए बिना (समाधि–अवस्था प्राप्त किए बिना) तत्त्वज्ञान प्राप्त होना कठिन है और तत्त्वज्ञान के बिना समाधि–अवस्था प्राप्त होना कठिन है। ये दोनों एक–दूसरे के आधार पर हैं। इन्हीं से फिर दुःखों का नाश और सुख की प्राप्ति होती है।

यजुर्वेद के 11वें अध्याय में दूसरे मंत्र में फिर यह आदेश है :

**युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितुः सवे।**
**स्वर्ग्याय शक्त्या।।** यजु. 11।2।।

महर्षि दयानन्द ने इसके जो अर्थ लिखे हैं उसका अभिप्राय यह है कि–'दुःखों से छूटकर मोक्ष–आनन्द प्राप्त करने के लिए योग तथा विज्ञान से अथवा तत्त्वज्ञान के सामर्थ्य से उपासना–योग द्वारा आत्मा को शुद्ध करके परमेश्वर में प्रकाशरूप आनन्द को प्राप्त हों।

**तत्त्वज्ञान क्या है?**

वास्तव में प्रकृति, जीव तथा परमात्मा का सत्यज्ञान ही तत्त्वज्ञान है। यह स्वच्छ ज्ञान समाधि–अवस्था में विवेकख्याति की भूमि पर पहुँचकर प्राप्त होता है। जीवात्मा और परमात्मा ये दोनों अपने वास्तविक स्वरूप में तो दृष्टिगोचर होते ही नहीं। जीवात्मा जब शरीर के साथ सम्बन्धित होता है तो यह अमूर्त से मूर्त दिखलाई देने लगता है और परमात्मा जब सृष्टि रचता है तो उसके सारे वैभव को देखकर उसका विराट् रूप दिखाई देने लगता है।

मनुष्य–शरीर में आत्मतत्त्व कौन से हैं

thearyasamaj.org



और अनात्मतत्त्व कौन–से हैं, इनका विवेक करने से आत्मतत्त्व का ज्ञान प्राप्त होता है और इस ब्रह्माण्ड में वह परमात्मा कौन है, जिसके ज्ञान से परमतत्त्व का ज्ञान होता है।

**जो पिण्डे सो ब्रह्माण्डे**

शरीर और ब्रह्माण्ड दोनों के तत्त्व एक ही हैं, इसलिए दोनों में बड़ी भारी समता है। चरक शारीरस्थान में जगत् और पुरुष की तुल्यता बतलाई है। वहाँ लिखा है:

**षड् धातवः समुदिता लोक इति शब्दं लभन्ते। तद्यथा पृथिव्या–**
**पस्तेजो वायुराकाशं ब्रह्म चाव्यक्तमित्येत एव च षड् धातवः समुदिताः**
**पुरुष इति शब्दं लभन्ते। तस्य पुरुषस्य पृथिवी मूर्त्तिरापः क्लेदस्–**
**तेजोऽभिसन्तापो वायुः प्राणो वियच्छिद्राणि ब्रह्मान्तरात्मा।।**

शारीरस्थान 5।3।।

'छः धातुओं से मिला हुआ जगत् है। पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश और अव्यक्त ब्रह्म या परमात्मा– इन छः से सम्मिलित मूर्तिमान् जगत् है। इस प्रकार मनुष्य–शरीर में पाँच भूत और छठा आत्मा है। जैसे मूर्तिमान् जगत् में पृथिवी देखने में आती है, ऐसे ही पुरुष का शरीर पृथिवी का तरह दिखलाई देने वाला है। जगत् में एक ओर जल का प्रभाव है, पुरुष शरीर में भी क्लेदरूप जल है। जगत् में एक आरे अग्नि है, शरीर में जठराग्नि है। जगत में पूर्व–पश्चिम को वायु गमन करती है, मनुष्य में प्राण–अपान का गमन है। मूर्तिमान् जगत् में एक ओर आकाश है, शरीर में छिद्रसमूह – रूपी आकाश है। मूर्तिमान् जगत् का प्रकाशक ब्रह्म है, शरीर में जीवात्मा है। इस प्रकार शरीर और ब्रह्माण्ड दोनों में बराबर–बाराबर धारा देखी जाती है।'

आदियोगी शिव भगवान् ने और भी स्पष्ट शब्दों में बतलाया है कि :

**देहेऽस्मिन् वर्तते मेरुः सप्तद्वीपसमन्वितः।**
**सरितः सागराः शैलाः क्षेत्राणि क्षेत्रपालिकाः।।**

' इस शरीर के भीतर सप्त द्वीप समन्वित सुमेरु पर्वत और नदियों के समूह तथा सागर–क्षेत्र और क्षेत्रपाल विद्यमान हैं' शिव भगवान् फिर पार्वती देवी को बतलाते हैं कि सप्त लोक और सप्त पाताल शरीर में भी हैं और उनके स्थानों का निर्देश करते हुए शिव जी कहते हैं:

**मूलाधारे तु भूर्लोकः स्वाधिष्ठाने भुवस्ततः।**
**स्वर्लोको नाभिदेशे च हृदये तु महस्तथा।।**
**जनलोकं कण्ठदेशे तपोलोकं ललाटके।**
**सत्यलोकं महारन्ध्रे इति लोकाः पृथक्: पृथक्।।**
**तलं पादांगुष्ठतले तस्योपरि तलातलम्।**
**महातलं गुल्फमध्ये गुल्फोपरि रसातलम्।।**
**सुतलं जंघयोर्मध्ये वितलं जानुमध्यगम्।**
**ऊर्वोर्मध्ये तलम्प्रोक्तं सप्तपातालमीरितम्।।**

'मूलाधार गुदा तथा लिङ्ग के बीच का स्थान में भूलोक, स्वाधिष्ठान लिङ्ग के ऊपर का स्थान में भुवर्लोक, नाभि में स्वर्गलोक, हृदय में महर्लोक, कण्ठ में जनलोक, ललाट में तपलोक और ब्रह्मरन्ध्र में सत्यलोक है। इसी प्रकार कटिदेश से उपरिस्थान में पृथक्–प्रथक् ये सात लोक हैं ऐसे ही पाँवों से ऊपर कटि–पर्यन्त सात पाताल लोक हैं– पाँवों के तले में तललोक, पाँव के उपरिभाग में तलातल और गुल्फ के बीच में महातल, गुल्फ के ऊपर रसातल, दोनों जंघाओं में मध्य में सुतल, जानु के मध्य में वितल और ऊरुओं के मध्य में पाताल लोक है। इन्हीं सात लोकों और साता पातालों को चौदह भुवन कहते हैं।'

**सन्ध्या में प्राणायाम मन्त्र**

ओं भूः। ओं भुवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः ओं तपः। ओं सत्यम्।

सन्ध्या में यह जो मन्त्र आता है, उसका मानसिक जप करते तथा प्राणायाम करते हुए इन्हीं सात–स्थानों या लोकों पर ध्यान लगाना होता है। इनको चक्र भी कहते हैं– (1) मूलाधार चक्र, (2) स्वाधिष्ठान चक्र, (3) मणिपूरक चक्र, (4) अनाहत चक्र या हृदय चक्र, (5) विशुद्ध चक्र, (6) आज्ञा चक्र, (7) सहस्रार चक्र ।

शरीर तथा ब्रह्माण्ड की तुल्यता का अनुभव तभी हो सकता है जब पहले ब्रह्माण्ड का आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर लिया जाय और साथ ही शरीर–तत्त्व के सम्बन्ध में भली प्रकार जान लिया जाय कि यह शरीर ब्रह्माण्ड से पृथक् नहीं। पञ्च भूतों से वह बना है, उन्हीं से शरीर भी बना है। हाँ, शरीर में एक विशेषता अवश्य है। शरीर में जीवात्मा ओर परमात्मा दोनों विद्यमान हैं। अनुभवी लोग शरीर में इन दोनों का प्रकाश देखते हैं। तत्त्वज्ञान को इस प्रकार जानता हुआ साधक फिर सम्पूर्ण जगत् के भावों को अपने शरीर में देखने लगता है और अपने शरीर के सम्पूर्ण भावों को जगत् में देखता है। उसे अब आत्मबुद्धि प्राप्त हो जाती है। वह संसार के किसी प्रदार्थ में न सुख देखता है, न दुःख देखता है। सम्पूर्ण जगत् को आत्मा में देखता हुआ यह समझता है कि आत्मा (जीवात्मा) ही सुख–दुःख का कर्त्ता है और कोई कर्त्ता नहीं, क्योंकि कर्म आत्मा ही करता है। सम्पूर्ण हेतु आदिकों से आत्मा अलग है, केवल कर्मवश पञ्चभूतों में फँसा हुआ है। कर्मक्षय होने से आत्मा इन सब भावों से पृथक् हो जाता है। जब यह तत्त्वज्ञान उत्पन्न हो जाता है तब साक्षात् आत्मज्ञान प्राप्त हो जाता है। उस समय दुःखों का अत्यन्त नाश होकर मोक्ष प्राप्त हो जाता है।

साधक सबसे प्रथम तो आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथिवी का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करे कि ये क्या वस्तु हैं और इनके कार्य, स्वभाव और गुण क्या । कौन सत्त्वगुण प्रधान है ? कौन रजोगुण और कौन तमोगुण वाला है? फिर अपने शरीर में यह देखें कि पञ्चप्राण कहाँ क्या काम करते हैं? अग्नि तथा जल की परिस्थिति शरीर में क्या है? यह सारा ज्ञान वीतराग गुरु द्वारा प्राप्त करके फिर अपनी ध्यान अवस्था में इनको प्रत्यक्ष करे। हर एक तत्त्व के शरीर में क्या कार्य हैं और वे ब्रह्माण्ड या जगत् में किस काम आते हैं ? शरीर के तत्त्वों और जगत् के तत्वों में ऐसी समानता या एकत्व हो जाय कि जगत् का कोई भी तत्त्व किसी भी शारीरिक तत्त्व को हानि न पहुँचा सके अपितु सहायक साथी और रक्षक हो जाए। यह कार्य बाह्य जग तथा आन्तरिक दुनिया की तुलना को सिद्ध कर देगा।

**आत्म–तत्त्व और ब्रह्म–तत्त्व का मिलाप**

शेष रह जायेगा आत्म–तत्त्व और ब्रह्म–तत्त्व का मिलाप। इसके सम्बन्ध में प्रारम्भ में यह समझ लेना लाभप्रद होगा कि ब्रह्म–तत्त्व तो सारे जगत् के भीतर भी और जगत् से बाहर भी बिराजमान है परन्तु वह जगत् की किसी भी वस्तु में लिप्त नहीं होता, असंग रहता है। तमाशा करने वाले और हैं; यह तो तमाशा देखता है और तमाशा करने वालों के (अच्छे या बुरे) कर्मों के अनुसार इन्हें इनाम (फल) देता है। जीवात्मा केवल शरीर में बन्द है। जब तक यह शरीर में है, मन और दस इन्द्रियों द्वारा सारा व्यवहार चलाता है। यह स्वाद और अस्वाद को चखता है और तब तक बन्धन में पड़ा रहता है जब तक स्वादु और अस्वादु दोनों प्रकार की भावनाओं का त्याग नहीं कर देता। जीवात्मा भूतों में लिप्त हो जाता है, आप तमाशा बन बैठता है और दुःख–सुख भोगता है। पर साधक जब यह समझ लेता है कि मैं पञ्च भूतों से सर्वथा पृथक् हूँ तो तो दुःखी नहीं होता।

**मै ऐनक नहीं हूँ**

ऐनक का प्रयोग करने वाला अपने–आपको ऐनक नहीं समझता। ऐसे ही साधक समझे कि मैं आँख नहीं, आँख तो केवल ऐनक है। नेत्र–इन्द्रिय का रूप जो विषय है, उस रूप का सूक्ष्म गोलक–रूप तन्मात्रा भी मन की ऐनक है। मन भी जीवात्मा की ऐनक है। तब मैं न तन्मात्रा हुआ, न इन्द्रिय हुआ, न विषय हुआ और न ही भौतिक तत्त्व हुआ। मैं तो हुआ शुद्ध आत्मा, जो न वृद्ध होता है, न जवान; जो न स्त्री है, न पुरुष; न कुमार है, न बालिका। उससे आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथिवी का बना कोई पदार्थ टूट जाता है या मेरे ही शरीर के मिले हुए पञ्चभूत बिखर जाते हैं तो मैं मोह और शोक में क्यों पड़ूँ ? मै रूदन क्यों करूँ ? मैं पीड़ित क्यों हो जाऊँ ? और मैं दुःख सागर में क्यों डूबूँ? रूप–तन्मात्रा के सम्बन्ध में जो बात कहीं गई, यही शेष विषयों, भूतों और तन्मात्राओं के सम्बन्ध में समझ लेनी चाहिए।

**देह आत्मा नहीं है**

आत्म और अनात्म वस्तुओं का जब पूरा विवेक किया जावे और साथ ही संसार और संसारी पदार्थों का भी विवेक हो जाय, फिर दुःख कहाँ ठहर सकता है? क्योंकि दुःख तो बन्धन से होते हैं। अनात्म वस्तुओं के तत्त्व को जानकर जब उनसे अपने–आप को पृथक् कर लिया तो बन्धन की निवृत्ति हो जाने से दुःख स्वयमेव नष्ट हो गये। देह को जब तक 'मैं' (आत्मा) समझा जा रहा है, दुःख तभी तक है और व्यव्हार में आप देह को 'मैं' (आत्मा) समझते भी नहीं। देख लीजिए – जब आप कहते हैं कि मेरी आँख में पीड़ा है तो इसके स्पष्ट अर्थ यह हैं कि आप आँख नहीं, आँख के स्वामी हैं। ऐसे ही आप कहते हैं कि मेरी टाँग में चोट लग गई है। इसका यही अर्थ है कि चोट 'मैं' (आत्मा) को नहीं लगी अपितु आत्मा ने जिस गृह में अपना निवास कर रखा है, उसके एक भाग में चोट लगी है; आत्मा को तो नहीं लगी। अनात्म या भौतिक पदार्थों से अपने–आप को अलग करके साधक जब अपने–आप को आत्मा अनुभव कर लेता हासै और ध्यान अवस्था में पहुँचकर जब आत्मस्वरूप का यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर लेता है तब कहा जाता है कि इसने तत्त्वज्ञान प्राप्त कर लिया।

ऋग्वेद के पहले ही मण्डल का यह मन्त्र ध्यानपूर्वक पढ़िये:

**तव शरीरं पतयिष्ण्वर्वन्तव चित्तं वात इव ध्रजीमान्।**
**तव शृङ्गाणि विष्ठिता पुरुत्रारण्येषु जर्भुराणा चरन्ति।।**

सूक्त163। मन्त्र 11।।।

'हे आत्मन्! तेरा शरीर पतनशील, विनाशवान् है। तेरा चित्त वेगवान् वायु के तुल्य अतिचंचल है। तेरे पुत्र इन्द्रिय–रूपी सींग बहुत बड़े–बड़े विषय–वासनारू जंगलों में विशेष स्थिरिता से विचरण करते हैं; बुरी तरह वासनाओं के वन में फँसे हुए हैं।' परन्तु आत्मा तो इनसे पृथक् है। यही ज्ञान धारण करना है। वेद भगवान् ने आत्मा तथा शरीर को एक ही मन्त्र में आदेश दिया है :

**इयं कल्याण्यजरा मर्त्यस्यामृता गृहे।**
**यस्मै कृता शये स यश्चकार जजार सः।।**

अथर्व. 10।8।।26।।

'कल्याण करने वाला यह आत्मदेवता अमर है और मर्त्य प्राणी के घर अर्थात् शरीर में रहता है। जिसे आत्मबोध हो जाता है, वह सुख प्राप्त करता है और जो पुरुषार्थ करता है वही स्तुति करने योग्य है।'

तत्त्वज्ञान से कार्यसहित अज्ञान की निवृत्ति हो जाती है। अज्ञान की निवृत्ति हो जाने पर आत्मतत्त्व और ब्रह्म के मध्य किसी प्रकार का आवरण नहीं रहता। उनका मिलाप तो हुआ ही हुआ है। क्या आत्मा से परमात्मा नहीं है ? निस्सन्देह है। दूरी का भ्रम तो अज्ञान से था, वह आवरण दूर हो गया। अब तो 'एकत्वमनुपश्यति' की अवस्था आ पहुँची। पर जैसे शरीर में आत्म और अनात्म वस्तु का विवेक करके आत्मा को खोज लिया जाता है, ऐसे ही शरीर और जगत् दोनों के भौतिक ज्ञान और तत्त्वों के द्वारा ब्रह्म को खोजा जाता है।

**शेष अगले अंक में....**

thearyasamaj.org



# वेद में मांस-भक्षण एवं नशीले पदार्थों का सेवन निषेध है

● महात्मा चैतन्यमुनि

यह दुर्भाग्य की बात है आज भी इस देश के कुछ तथाकथित इतिहासकार यह सिद्ध करने का प्रयास करते हैं कि वैदिक-काल में ऋषि-मुनि भी गोमांस खाते थे और सोम नाम का मादक द्रव्य पीते थे। यह देखकर अत्यंत दुःख होता है कि स्वयं को बुद्धिजीवी कहलाने वाले कुछ तथाकथित विद्वान इस प्रकार की अनर्गल बातों का प्रचार और प्रसार करते हैं। वास्तव में ऐसा दुःसाहस अज्ञानता के कारण ही किया जाता है। जिन लोगों ने अपनी संस्कृति और ग्रंथों का गहन अध्ययन नहीं किया है तथा किसी न किसी प्रकार प्राचीन भारतीय संस्कृति को हेय और हीन बताने का प्रयास करना ही जिनका लक्ष्य है, ऐसे लोग ही इस प्रकार की अप्रमाणित एवं आधारहीन बातें किया करते हैं। अपनी इन मान्यताओं का आधार वे पूर्वाग्रह से ग्रसित होकर ऐसे ग्रंथों को बनाते हैं जिनमें या तो प्रक्षिप्त अंशों की भरमार है या फिर उन जैसे ही अज्ञानी लोगों द्वारा रचे गए हैं। वेद आदि ग्रंथों के भी तथाकथित विद्वानों ने ऐसे भाष्य कर दिए हैं कि कुछ लोगों को इस प्रकार के कुत्सित विचारों को उठाने का अवसर मिल जाता है क्योंकि उनका स्वयं का चिंतन तो होता नहीं है। कर्मकाण्ड और रूढ़िवाद का सहारा लेकर वेदों का जो भाष्य कुछ विद्वानों ने किया तथा उसी के आधार पर और विकासवाद को सत्य सिद्ध करने एवं भारतीय संस्कृति को हेय बताने के उद्देश्य से पाश्चात्य लोगों ने जो कुछ लिखा उसी को तथा कुछ प्रक्षिप्त अंशों को लेकर ऐसी बातें कही जाती हैं जबकि वेदादि ग्रंथों में इस प्रकार का कोई विधान नहीं है। इस बात पर भी विचार करना अपेक्षित है कि यदि कालांतर में कभी किन्हीं लोगों ने इस प्रकार के अभक्ष्य पदार्थों का सेवन किया भी हो तो क्या उसे सबके लिए उपयोगी और प्रमाणित मान लिया जाए। हमें वेदों की मूल मानवतावादी विचारधारा को लेकर चलने की आवश्यकता है जिसके आधार पर व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति हो सके तथा एक सार्वभौमिक वैदिक अर्थात् मानव धर्म की स्थापना हो सके। हमारे लिए पूर्वजों की अच्छी बातें ही अनुकरणीय और आदर्श होनी चाहिए तथा उन्हीं का प्रचार-प्रसार करने की जरूरत है, म्लेच्छ व अभद्र और असभ्य लोगों की नहीं। यदि ऐसी भावना व्यक्ति के मन में होगी तो वह केवल सतही बातों की चर्चा नहीं करेगा बल्कि यदि उसे ऐसा कहीं लगता है तो वह सत्य और असत्य का निर्णय करने के लिए पूरी गवेषणा करेगा। इतिहास लेखकों का उद्देश्य किसी भी विषय की तह तक पहुंच कर सत्य का उद्घाटन करना ही होना चाहिए मगर कुछ लेखकों ने इस संबंध में भी लोगों को भ्रमित करने वाला बातें ही लिखी हैं।

यहाँ हम यह बात एक बार पुनः स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि वेदों के बारे में भाष्यकारों द्वारा जो मुख्य रूप से भूल हुई है उसी के कारण वेदों के ऊपर इस प्रकार के मनमाने आरोप लगाए जाते रहे हैं। जिन पाश्चात्य लोगों ने वेद पर कुछ लिखा है उसका आधार भी भारतीयों द्वारा किए गए भाष्य ही रहे हैं। उनका इस संबंध में न तो अपना कोई ज्ञान ही था और न ही वे भारतीय संस्कृति की उत्कृष्टता एवं वैज्ञानिकता को स्वीकार करना चाहते थे। वेद परमात्मा द्वारा प्रदत्त सार्वभौमिक तथा निर्भ्रान्त ज्ञान है इसलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने साफ शब्दों में कहा है कि या तो वेद परमात्मा द्वारा प्रदत्त ज्ञान नहीं है और यदि परमात्मा द्वारा दिया गया ज्ञान है तो वेद में कोई बात ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव के विपरीत नहीं हो सकती है। इसलिए वेद मंत्रों का ऐसा अर्थ नहीं किया जा सकता जो परमात्मा के सत्य, न्याय, निराकार, दया, पवित्रता और सर्वज्ञता आदि गुणों के विपरीत हो। वेद में इस प्रकार की कोई बात भी नहीं हो सकती है जो सृष्टि-नियम के विरुद्ध हो। वेद मंत्रों के अर्थ ऐसे भी नहीं हो सकते हैं जो व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति में किसी प्रकार से बाधक हों। वेद परमात्मा का दिया हुआ नित्य ज्ञान है इसलिए उसमें किसी प्रकार का अनित्य इतिहास आदि भी नहीं हो सकता है। वेद मंत्र पहले हैं तथा उनका विनियोग बाद में, इसलिए विनियोग के आधार पर मंत्रों का अर्थ नहीं किया जाना चाहिए बल्कि मंत्र का स्वतंत्र और स्वाभाविक अर्थ किया जाना ही अपेक्षित है। वेद मंत्रों के व्याख्याता को संस्कृत का ज्ञाता तो होना ही चाहिए मगर साथ ही उसे पूर्व प्रसंग का भी ध्यान रखना चाहिए। मंत्रों में आने वाले सोम, गौ तथा इंद्र आदि शब्दों का अर्थ उनके विशेषणों के आधार पर निश्चित किया जाना चाहिए न कि किसी काल्पनिक मान्यता या काल्पनिक देवता के आधार पर। वेद का व्याख्याता तपस्वी, संयमी और परमात्मा के प्रति पूर्णरूप से श्रद्धालु होना चाहिए। वेद को पूरी तरह समझने के लिए वेद के शब्दों को रूढ़ि न मानकर यौगिक माना जाए तभी उसमें निहित ज्ञान-विज्ञान के बारे में हमें जानकारी मिल सकती है। हम देखते हैं कि इन समस्त विशेषताओं को लेकर यदि किसी ने वेद पर अपना मन्तव्य प्रस्तुत किया है तो वे महर्षि दयानंद सरस्वती जी ही थे। ये स्थापनाएं उनकी अपनी कल्पना-प्रसूत नहीं थी बल्कि अपने ग्रंथ ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में वे यास्क का उद्धरण देते हुए लिखते हैं कि ऋचाओं को तीन भागों में बांटा जा सकता है-प्रत्यक्ष, परोक्ष और आध्यात्म परक (अधियज्ञ, अधिदैवत और अध्यात्म), इसलिए तदनुसार ही उनके अर्थ भी किए जाने चाहिए। महर्षि दयानंदजी ने मंत्रार्थों को दो भागों में विभक्त किया है-पारमार्थिक अर्थ और व्यावहारिक अर्थ। यदि इस प्रकार से वेद को समझा जाता तो किसी को आक्षेप लगाने का अवसर ही प्राप्त नहीं हो सकता।

वेद पर कलम चलाने वालों ने उपरोक्त बातों को ध्यान में नहीं रखा इसलिए उन्होंने-**उक्ष्णो हि मे पंचदश साकं पचन्ति विंशतिम्।.....इदुभा कुक्षी पृणन्ति मे विश्वस्मादिन्द उत्तरः।।** (ऋ. 10-86-14) मंत्र का अनर्थ करते हुए लिखा कि मेरे लिए इंद्राणी द्वारा प्रेरित यज्ञकर्त्ता लोग पंद्रह-बीस बैल मारकर पकाते हैं, जिन्हें खाकर मैं मोटा होता हूँ। वे मेरी कुक्षिओं को सोम से भी भरते हैं। इसी तर्ज पर पाश्चात्य लोगों ने भी यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि वैदिक लोग नशीला पेय पीते थे तथा मांस आदि का भक्षण करते थे-'Inder had a special liking for bulls, (RegvedaV29, 7ab, VI 17 11 b. VIII 12.8abx27 2cx28 3cx86.14ab), Verify the cow is food, Soma was the name of a heady drink (तैत्रेय ब्रा. III 9.8 शतपथ III 1.2.21) विस्तार भय से हम यहां पर उन प्रसंगों का अधिक उल्लेख नहीं करना चाहते है कि वेद या अन्य आर्ष ग्रंथों पर अविवेकी लोगों ने किस प्रकार के आरोप लगाए हैं। हम तो थोड़ा सा यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि हमारे प्राचीन ग्रंथों में इस प्रकार के अनर्गल प्रसंग बिल्कुल भी नहीं हैं। कुछ लोग (ऋ 1-24-12 से 15 तक के ) वेद मंत्रों में '**शुनःशेप**' शब्द को लेकर नरबलि प्रथा की चर्चा करते हैं मगर निरुक्त के आधार पर महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने वेदों के समस्त शब्दों को यौगिक बताया है। पहले ही मंत्र का अर्थ द्रष्टव्य है-**तदिन्नक्तं तद्दिवा मह्यमाहुस्तदयं केतो हृद आ वि चष्टे। शुनःशेपोयमह्वद्गृभीतः सो अस्मान् राजा वरुणो मुमोक्तु।।** (ऋ. 1-24-12) पदार्थः-विद्वान लोग (नक्तम्) रात (दिवा) दिन जिस ज्ञान का (आहुः) उपदेश करते हैं (तत्) उस और जो (मह्यम) विद्या धन की इच्छा करने वाले मेरे लिए (हृदः) मन के साथ आत्मा के बीच में (केतः) उत्तम बोध (आ वि चष्टे) सब प्रकार से सत्य प्रकाशित होता है (तदित्) उसी वेद बोध अर्थात् विज्ञान को मैं मानता, कहता और करता हूं (यम्) जिसको (शुनःशेपः) अत्यंत ज्ञान वाले विद्या व्यवहार के लिए प्राप्त और परमेश्वर वा सूर्य का (अव्हत्) उपदेश करते हैं जिससे (वरुणः) श्रेष्ठराजा प्रकाशमान परमेश्वर हमारी उपासना को प्राप्त होकर छुड़ावे और उक्त सूर्य भी अच्छे प्रकार जाना और क्रियाकुशलता में युक्त किया हुआ बोध (मह्यम्) विद्याधन की इच्छा करने वाले मुझको प्राप्त होता है (सः) हम लोगों को योग्य है कि उस ईश्वर की उपासना और सूर्य का उपयोग यथावत् किया करें।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस मंत्र में कहीं भी नरबलि आदि का उल्लेख नहीं है। अज्ञान और अविवेक के कारण लोगों ने वेद पर इस प्रकार के मिथ्यारोप लगाने की कुचेष्टा की है। इसी प्रकार योगिकवाद को न समझने के कारण गोमेध, अश्ववेध तथा नरमेध आदि यज्ञों के भी लोगों ने मनमाने अर्थ किए हैं। वेद में यज्ञ की महानता के बारे में कहा है-**यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।** (ऋ. 10-90-16)

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

thearyasamaj.org



# कर्मयोगी महात्मा हंसराजः एक अनमोल व्यक्तित्व

एक दीपक जल उठता है, उससे केवल चारों ओर का अंधकार ही दूर नहीं होता अपुति उसकी शिखा के स्पर्श से और भी दीपक प्रदीप्त हो उठते हैं और सम्पूर्ण वातावरण को प्रकाशमान कर देते हैं। भारत के महाविद्वान महर्षि दयानन्द के जीवन के स्पर्श से महात्मा हंसराज का जीवन विमल विभा से उज्जवल हो उठा था। साधनहीन ग्रामीण परिवार में जन्म लेकर एक व्यक्ति चारों ओर की प्रतिकूल परिस्थितियों से संघर्ष करता हुआ उन्नति के शिखर पर पहुँच सकता है तो इसका उदाहरण थे– महात्मा हंसराज।

19 अप्रैल 1864 को पंजाब के बजवाड़ा ग्राम, होशियारपुर में जन्मे महात्मा हंसराज ने मात्र 22 वर्ष की आयु में सन् 1886 में सीमित साधनों के उपरान्त आर्य समाज, लाहौर के भवन में दयानन्द ऐंग्लो वैदिक स्कूल की स्थापना की। बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर सरकारी एवं आकर्षक नौकरियों को ठुकरा कर आर्य समाज, लाहौर के प्रधान को पत्र लिखकर दयानन्द स्कूल खुलने पर अवैतनिक मुख्याध्यापक बनने की इच्छा जताई और लिखा कि – 'मैं तो उन व्यक्तियों में से हूं जो यह समझते हैं कि एक पीपल के पेड़ के नीचे बेंचों और दरियों के बगैर घास के ऊपर बैठ कर लड़कों को शिक्षा दी जा सकती है। मैं कहता हूं कि अच्छे आदमी बनाने के लिए सजावट की आवश्यकता नहीं।'

महात्मा हंसराज का समूचा जीवन त्याग की आभा, बलिदान की ज्योति एवं विवेक की दीपशिखा से प्रज्ज्वलित था। उनका जीवन सच्चे कर्मयोगी की भाँति आसक्ति से रहित था। सन् 1886 से सन् 1911 तक उन्होंने दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कॉलेज रूपी पौधे को सींचा और जब उसनें बृहद् वृक्ष का रूप धारण कर लिया तो प्राचार्य पद का त्याग कर आर्य समाज के प्रचार में तल्लीन हो गए। वे बिगड़े काम की बागडोर हाथ में लेते थे और उसको सुधारने और व्यवस्थित करने के बाद स्वयं को उस कार्य से अलग कर लेते थे। उनकी जीवन शैली में अनासक्ति और त्याग ही सर्वत्र सुशोभित है।

निस्वार्थ लोकोपकारी जीवन का यह आदर्श उनकी वाणी में दृष्टिगोचर होता है। उनके आदर्श के महान सौन्दर्य को वर्णित करते हुए अपना जीवन चरित्र छपवाने से इंकार करते हुए उन्होंने कहा कि–

**'बादल कहाँ से उठा? किस रास्ते से आया? बरखा की बूँदें कहती हैं, तुम्हें इससे क्या? तुम अपने खेत की सिंचाई करा लो, सूखी खेतियाँ हरी बना लो, रीते तालाब भरवा लो।'**

अपनी निर्धनता में आनंदित और तप व त्याग की मिसाल थे महात्मा हंसराज। अलीगढ़ विश्वविद्यालय के संस्थापक सर सय्यद अहमद खां डी.ए.वी. कॉलेज देखने लाहौर आए। उन्होंने कॉलेज को देख कर कहा कि 'हमारे कॉलेज की इमारतें आपसे अधिक विशाल हैं। हमारी साइंस की प्रयोगशालाएं अधिक शानदार हैं परन्तु अफसोस हमारे पास कोई हंसराज नहीं है।'

प्रबंधन में कुशल महात्मा हंसराज द्वारा रचित साहित्य उनके बुद्धिजीवी होने का प्रमाण स्वयं देता है। उन्होंने मानव संग्रह, संध्या पर व्याख्यान, दशप्रश्नी की समीक्षा एवं ऋषि दर्शन भाग जैसा साहित्य लिख मानव धर्म की व्याख्या की। वे आर्य समाज के सर्वमान्य नेता एवं शिक्षा शास्त्री थे। 'वैदिक धर्म प्रचार के साधन' शीर्षक ग्रन्थ की रचना का उल्लेख भी मिलता है।

महात्मा जी ने आर्य समाज के प्रचार और डी.ए.वी. संस्था को पल्लवित करने को सर्वोपरि माना जहाँ उन्हें निजी सम्बन्धों का परित्याग करने में भी कोई संकोच नहीं था। अपने ध्येय को सर्वोपरि मानते हुए वे कहते थे कि 'मनुष्य के जीवन का एक ध्येय होना चाहिए, एक केन्द्र जहाँ पहुँच कर वह अपना जीवन कुर्बान कर सके, अपनी धन, दौलत और अपने बाल बच्चों को आसानी से छोड़ सके। एक स्थान होना चाहिए– जहाँ पहुँच कर वह गर्व से कह सके कि चाहे प्राण चले जाएं, चाहे सब ओर से विनाश का ताण्डव घेर ले, पर वह उस स्थान से लौटेगा नहीं, पीछे नहीं हटेगा। ऐसे स्थान पर ही मनुष्य का वास्तविक चरित्र और उसका वास्तविक मोल मालूम होता है।'

14 नवम्बर 1938 को विद्या, धर्म, बलिदान, तप, त्याग, सादगी का सूर्य अस्त हो गया। महात्मा जी ने आर्य समाज की मान मर्यादा के लिए अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया तथा नैतिक चरित्र एवं शिक्षा की जगमगाती किरणों से अज्ञान रूपी अंधकार को नष्ट कर दिया। किसी कवि ने सच ही कहा था–

**हँस हँस के हंसराज ने, तन मन व धन लुटा दिया।**

प्राचार्य
डी.ए.वी. कॉलेज
अम्बाला (शहर)

# आर्य समाज के अविस्मरणीय शहीद नाथूराम जी

● डॉ. अशोक आर्य

महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती की धरोहर स्वरूप प्राप्त बलिदानी परम्परा का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि यह वह अग्नि है जिसे बुझाने का जितना प्रयास किया गया है, यह उतनी ही अधिक तीव्र होकर धधकी है। वेद धर्म के दीवानों ने इसे प्रचण्ड रखने के लिए अपने आप को समिधा बना कर इस बलिदानी हवन कुण्ड में झोंक दिया। आर्यवीरों की इसी बलिदानी परम्परा में सिन्ध प्रान्त के नाथूराम जी का नाम सदा बड़े आदर के साथ लिया जाता रहेगा।

1 अप्रैल सन् 1904 को एक सम्भ्रान्त ब्राह्मण पं. कीमत राय जी के यहां जन्मे इकलौते पुत्र नाथूराम को बड़े लाड़ प्यार से पाला गया। नाथूराम जी बाल्यकाल से ही गम्भीर प्रकृति के थे। स्वामी श्रद्धानन्द जी के अमर बलिदान का नाथूराम जी के हृदय पर प्रभाव पड़ा तथा उन्होंने उठती जवानी में आर्यसमाज में आकर्षण अनुभव करते हुए 1927 में अपने सगे सम्बन्धियों व परिजनों की चिन्ता छोड़ आर्य समाज में प्रवेश किया तथा तन्मय हो पूरी लगन से धर्मप्रचार में जुट गए। जब 1929 में आपके गृह नगर हैदराबाद सिंध में आर्य समाज की स्थापना हुई तो आप भी इसके सदस्य बने। वादविवाद में आप पौराणिकों को उत्तर देने में आनन्द अनुभव करते थे।

**महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती की धरोहर स्वरूप प्राप्त बलिदानी परम्परा का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि यह वह अग्नि है जिसे बुझाने का जितना प्रयास किया गया है, यह उतनी ही अधिक तीव्र होकर धधकी है। वेद धर्म के दीवानों ने इसे प्रचण्ड रखने के लिए अपने आप को समिधा बना कर इस बलिदानी हवन कुण्ड में झोंक दिया। आर्यवीरों की इसी बलिदानी परम्परा में सिन्ध प्रान्त के नाथूराम जी का नाम सदा बड़े आदर के साथ लिया जाता रहेगा।**

1931 में मिर्जाइयों की अंजुमन द्वारा जब हिन्दू देवी देवताओं का गन्दा स्वरूप पेश किया जाने लगा तो तुलसी राम जी कुपित हो उठे। वह उन्हें उत्तर देने के लिए आगे आए। इसी सन्दर्भ में एक पुस्तक ''तारीखे इस्लाम'' का सिन्धी भाषा में अनुवाद प्रकाशित करवा दिया जबकि मूल पुस्तक किसी ईसाई की लिखी थी। मौलवियों से कुछ प्रश्न भी पूछे। कोई उत्तर न बन पाने पर मिर्जाइयों ने मुसलमानों को नाथूराम के विरुद्ध उकसाना शुरू किया। घृणा भरा वातावरण तैयार करने के बाद 1933 में नाथूराम जी के विरुद्ध अभियोग चला दिया। कोर्ट में यह सिद्ध होने के बाद कि यह नाथूराम का लिखा न होकर केवल अनुवाद मात्र है तो भी उन्हें सेशन सुपुर्द कर दिया गया, जहां उन्हें डेढ़ वर्ष का करावास तथा एक सहस्र रुपए का दण्ड सुनाया गया। इस अन्याय पूर्ण निर्णय से सिन्ध के प्रत्येक परिवार में शोक की लहर फैल गई। जबकि मिर्जाइयों में मूल ईसाई लेखक के विरुद्ध एक शब्द बोलने का भी साहस नहीं हुआ।

चीफ कोर्ट में इस अन्याय के विरुद्ध अपील की गई। 20 दिसम्बर 1934 को बेंच ने केस पर निर्णय देना था, हाल खचाखच भरा था। अकस्मात् न्यायालय में एक भयंकर चीत्कार सुनाई दी। अब्दूल कयूम नामक एक मतान्ध पठान ने मौका पाकर नाथूराम जी के पेट में छुरा घोंप दिया। पं. लेखराम के समय के अनुरूप ही धर्मवीर नाथूराम की अन्तडियां बाहर निकल आईं। यहीं पर ही नाथूराम जी अमरत्व को प्राप्त हुए। हत्यारे को मौके पर ही पकड़ लिया गया। शहीद को अन्तिम विदा देने भारी भीड़ उमड़ आई। नगर में हड़ताल की गई। पूर्ण वैदिक रीति से संस्कार हुआ। इससे समाज में एक नया जोश पैदा हुआ। हत्यारे को फांसी हुई।

आर्य कुटीर,116 मित्र विहार
मण्डी डबवाली–125104 हरियाणा

thearyasamaj.org



# शिवभक्त! पहचानें कौन है मालामाल

● आचार्या सूर्या देवी चतुर्वेदा

शिवरात्रि के देवता शिव **विश्वनाथ हैं,** यह लोक प्रसिद्ध विचार है। इस प्रसिद्धि के प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में **काशी का विश्वनाथ मन्दिर भी विद्यमान है।** विश्वनाथ मन्दिर के विद्यमान रहते किसी को भ्रम या संदेह भी नहीं हो सकता? कि शिव विश्वनाथ हैं! या नहीं? क्योंकि विश्वनाथ मन्दिर में शिवलिंग जो प्रतिष्ठापित है।

शिवलिंगाधिष्ठित शिव की महिमा में शिव त्रिगुणातीत हैं, भावातीत हैं, कल्पनातीत हैं, करुणेश्वर हैं, प्रलयंकर हैं, महेश्वर हैं आदि-आदि कहा जाता है। इन महिमाओं के साथ **शंकर मन्दिर, भोले बाबा मन्दिर, विश्वनाथ मन्दिर** आदि मन्दिरों में प्रतिष्ठित शिव के लिए जहाँ यह प्रसिद्ध है कि शिव विश्वनाथ हैं, वहीं इन मन्दिरों के शिव के लिए लोक में, पुराण साहित्य में यह भी भली भाँति प्रतिपादित है कि शिव ऐश्वर्यशाली हैं, पर यह ऐश्वर्य इनका नहीं, अपितु **अन्नपूर्णा देवी** द्वारा खैरात=याचना में मिला हुआ ऐश्वर्य है।

महेश्वर कहे जाने वाले शिव की **ऐश्वर्य सम्बन्धी इस बदहाली=दुर्दशा** एवं **अन्नपूर्णा की खौरात=अन्न** आदि ऐश्वर्य बाँटने की कथा पुराणों के महनीय पण्डित अपनी कथाओं में प्रायः बताते हैं एवं दूरदर्शन आदि में भी एतद् विषयक अपना वक्तव्य देते रहते हैं। उन पुराण पण्डितों की एतद् विषयक कथा का निचोड़ यह होता है कि **ब्रह्मवैवर्त पुराण** के काशी खण्ड में लिखा है कि एक प्रसंग में पार्वती जी शिव जी से रूठ गईं, पुनः काशी में अन्नपूर्णा देवी के रूप में प्रकट हुईं। काशी में प्रकटीभाव के कारण काशी में उनके नाम का अन्नपूर्णा मन्दिर भी है, जिसका बड़ा महत्त्व है। पण्डित यह भी बताते हैं कि शंकराचार्य जी जब प्रथम बार काशी में आये तब उन्होंने अन्नपूर्णा देवी का दर्शन किया एवं उस पार्वती देवी से अन्न की याचना भी की। आचार्य शंकर की भांति **महेश्वर शिव** ने भी काशी जाकर अन्नपूर्णा देवी से अन्ना की याचना की और उन्हें अन्नपूर्णा ने अन्न देकर उनकी क्षुधा को दूर किया। पुराण पण्डित अन्नपूर्णा की इस महिमा को बताते हुए जिन स्तोत्रों को पढ़ते हैं, वे स्तोत्र हैं–

**अन्नपूर्णे सदापूर्णे शंकरप्राणवल्लभे।**
**ज्ञानवैराग्यसिद्धिर्यर्थं भिक्षां देहि च पार्वति।।**
**विचित्रवसने देवि त्वन्नदानरतेऽनघे।**
**शिवनृत्यकृतामोदे अन्नपूर्णे नमोस्तु ते।**

अन्नपूर्णा द्वारा शिव जी को अन्न देने एवं अन्नपूर्णा देवी की यह महत्ता अभी इसी मास 7.2.2014 को समय 2.30 बजे जी न्यूज दूरदर्शन पर भी सुनी व देखी। दूरदर्शन पर अन्नपूर्णा देवी का एक चित्र दिखाया गया जिसमें एक हाथ में करछुल एवं दूसरे हाथ में एक पात्र था। एक चित्र ऐसा भी था, जिसमें शिव शंकर अपना हाथ पसारे हुए अन्नपूर्णा के पास खड़े हैं, अन्नपूर्णा करछुल से शिव के हाथ में अन्न दे रही हैं। जी न्यूज की प्रवक्त्री ने यह भी बताया कि अन्नपूर्णा देवी के हाथ में जो करछुल है वह सर्व रत्नों से निर्मित है, जिससे वे अन्न बांटती हैं। उनकी कृपा से कोई भूखा नहीं रहता।

**आश्चर्य ही नहीं! महदाश्चर्य है। दुनियां भर में विश्वनाथ कहे जाने वाले शिवरात्रि के देव अन्न से खाली हैं। इससे स्पष्ट है कि विश्वनाथ शिव कोई और है, विश्वनाथ मन्दिर आदि मन्दिरों में प्रतिष्ठित शिव विश्वनाथ नहीं है।**

**विश्वनाथ** संस्कृत का शब्द है। **विश्वस्य नाथः विश्वनाथः।** विश्वनाथ वह होता है, जो सम्पूर्ण जगत् का नाथ होता है। **नाथृ अश्चोपतापैश्वर्याशीषुः** धातु से सिद्ध **नाथ** शब्द है। **नाथ** शब्द स्वामी, रक्षक, पालक आदि अर्थों का वाचक है। इस प्रकार विश्वनाथ शब्द का अर्थ हुआ जो सम्पूर्ण जड़ चेतन जगत् का लालन पालन करता है, मिट्टी, पानी, धूप, हवा, आकाश का नियामक व्यवस्थापक होता है, अन्न, वृक्ष, वनौषधि, पर्वत आदि का उत्पादक धारक होता है, सोना, चाँदी, लोहा, ताँबा आदि का निर्माता होता है। जगत् के जितने भी ऐश्वर्य, शक्ति, आधिपत्य, धन, वैभव, बड़प्पन आदि हैं, उन सबका मूल होता है, वह विश्वनाथ कहा जाता है। तात्पर्य हुआ जो सर्वशक्तिसम्पन्न, धनाढयों का हो, भिक्षुक याचक न हो, वह विश्वनाथ कहने योग्य है।

**भिक्षुक याचक से रहित विश्वनाथ तो वह निराकार, सर्वाधार ब्रह्म है, जिसके शिव, शंकर आदि नाम हैं, जिसका मुख्य नाम ओम् है।** ओम् नाम की महिमा, वरिमा वेद, उपनिषद्, दर्शन आदि सच्छास्त्रों में प्रतिपादित है। **उस ओम् नाम में ही ईश्वर के विराट्, अग्नि, विश्व आदि नाम समाहित हैं। विश्व ओम् वाच्य परमात्मा का ही नाम है।** परमात्मा का विश्व नाम क्यों है? क्योंकि वह अपनी सत्ता से सम्पूर्ण जगत में रमा हुआ है। विश्व शब्द का निर्वचन है–

1. **विशन्ति प्रविष्टानि सर्वाणि आकाशादीनि भूतानि यस्मिन् स विश्वः ईश्वरः।**

अर्थात् जिसमें आकाशादि सभी भूत प्रवेश करते हैं, अतः वह ईश्वर विश्व है।

2. **सः आकाशादिषु सर्वेषु भूतेषु प्रविष्टः स विश्वः ईश्वरः।** उणा. 1/151।।

अर्थात् जो आकाशादि सभी भूतों में, पदार्थों में प्रविष्ट है, अतः वह ईश्वर विश्व संज्ञा वाला है।

विश्व के निर्वचनों से स्पष्ट है कि जगन्नियन्ता, निराकार, सर्वेश्वर जगत् के कण-कण में विद्यमान है। उससे कोई भी कण खाली नहीं है। उस विश्वरूप ईश्वर की महिमा बताते हुए वेदों में कहा है–

**गर्भो यो अपां, गर्भो वनानां गर्भश्च स्थातां, गर्भश्चरथाम्।**
**अद्रौ चिदस्मा, अन्तर्दुरोणे विशां न विश्वो, अमृतः स्वाधीः।।**

ऋ. 1/70/2।।

अर्थात्, यह **अपां गर्भः**=जो प्राण व जल के, **गर्भः**=अनर्थ को दूर करता है (**गिरत्यनर्थानिति वा गर्भः,** निरु. 10/2/23), **वनानां गर्भः**=सेवनीय पदार्थों, रश्मियों की विकृति निवारक है, **च स्थातां गर्भः**=और स्थावर पदार्थों का रक्षक है, **चरथाम्**=गति करने वाले पदार्थों का पोषक है, **चित् अद्रौ**=और सुदृढ़ शिला आदि सघन पदार्थों में, **अस्मै**=जगत् के लिए, **अन्तः**=मध्य में, **दुरोणे**=गृह में, **विशां न**=प्रजाओं के समान वह आप, **अमृतः**=अविनाशी, अनुत्पन्न, **स्वाधीः**=सर्व पदार्थों की धारक शक्ति के द्वारा, **विश्वः**=प्रविष्ट है।

मन्त्र का भाव है कि वह विश्वरूप परमेश्वर समस्त जड़ चेतन पदार्थों का धारक, रक्षक, पालक, उत्पादक है। वह ही इन सब पदार्थों का स्वामी है, अधिपति है, सबका नायक है, अतः वह विश्व है, विश्वपति है, विश्वनाथ है।

जो विश्वनाथ है, वह अन्नपति भी है। उसके अन्नपति होने में कोई सन्देह नहीं, उसे किसी से अन्न माँगने की आवश्यकता भी नहीं, वह अन्न का स्वामी है। अन्न बनाने वाला है। अन्न देने वाला भी वही है, उसी अन्नपति से अन्न की याचना भी की जाती है। मन्त्र है–

**अन्नपतेऽअन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः।**
**प्रप्र दातारं तारिष ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे।।**

यजु. 11/83।।

अर्थात् हे **अन्नपते!**=अन्न के स्वामी, **नः**=हमारे लिए, **अनमीवस्य, शुष्मिणः**=रोगरहित, सुखकारक, बहुत बलकारक (**शुष्ममिति बलनाम** निघ. 2/9), **अन्नस्य देहि**=अन्न को दीजिए, और मुझ, **प्रप्र**=प्रकर्षरूप से, **दातारम्**=अन्न को देने वाले को, **तारिष**=तृप्त करें, अन्न द्वारा, **द्विपदे चतुष्पदे**=दो पैर वाले मनुष्य आदि तथा चार पैर वाले गौ आदि पशुओं में, **ऊर्जम्**=ऊर्जा व पराक्रम को, **धेहि**=धारण करावें।

मन्त्र से सुस्पष्ट है, निराकार ईश्वर अन्नपति है, वही अन्न का देने वाला है कि वह ही अन्न में रस डालने वाला है, अन्न को बनाने वाला है। वह अन्न से खाली नहीं है, वह अन्न का भिक्षुक याचक नहीं है, वह तो अन्न का दाता है।

इतना ही नहीं जहाँ वह ईश्वर अन्नपति है, वहीं वह **अन्न स्वरूप** भी है। अन्न स्वरूप का तात्पर्य है–

**अनिति जीवयतीति अन्नम्।**

उणा.3/10।।

अर्थात् जो **अन प्रापने**=प्राण धारण कराता है, वह अन्न कहा जाता है। ईश्वर प्राण धारण कराता है, अतः **ईश्वर अन्न स्वरूप** है। गोधूम, यव, मुद्ग आदि पदार्थ भी अन्न कहे जाते हैं, क्योंकि वे भी प्राण धारण कराते हैं। **अन्नम् हि प्राणाः** शत. ब्रा. 2/2/1/6। इस प्रकार स्पष्ट है प्राण धारण कराने से **ईश्वर अन्न रूप** है।

**अन्न** शब्द जैसे **अन प्राणने** धातु से बनता है, वैसे ही **अद भक्षणे** धातु से भी **अन्न** शब्द सिद्ध होता है। ईश्वर जैसे प्राण धारण कराने के कारण अन्न नाम से कहा जाता है, वैसे ही ईश्वर अन्न इसलिए भी कहाता है, क्योंकि वह प्रलय रूप में सम्पूर्ण जगत् को खा लेता है, संहार कर देता है। उपनिषद् में कहा है–

**अन्नाद् भूतानि जायन्ते जातान्यन्नेन वर्धन्ते।**
**अद्यतेऽत्ति च भूतानि तस्मादन्नं तदुच्यते।।**

तैति. उपनि. 2/2।।

अर्थात् अन्न से प्राणी उत्पन्न होते हैं,

**अन्न शब्द जैसे अन प्राणने धातु से बनता है, वैसे ही अद भक्षणे धातु से भी अन्न शब्द सिद्ध होता है। ईश्वर जैसे प्राण धारण कराने के कारण अन्न नाम से कहा जाता है, वैसे ही ईश्वर अन्न इसलिए भी कहाता है, क्योंकि वह प्रलय रूप में सम्पूर्ण जगत् को खा लेता है, संहार कर देता है। उपनिषद् में कहा है–**

*शेष पृष्ठ 09 पर* ☞

# उत्कृष्ट शंका–समाधान

● स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक

**शंका – 'शंका–समाधान' क्या है, इससे क्या लाभ होते हैं ? कृपया इसके नियम बताइए।**

**समाधान** – 'शंका समाधान' एक आवश्यक कार्यक्रम है। ऋषि कहते हैं कि, जब–जब विद्वानों के समीप जाएं, तब–तब सबके कल्याण के लिए प्रश्नोत्तर अवश्य करें। ''जब–जब विद्वानों के समीप जाएं, तब–तब सबके कल्याण के लिए'' यह वाक्यांश खास ध्यान देने का है। अपने और सबके हित के लिए प्रश्न पूछें। इससे अपनी शंका का समाधान तो होगा ही, साथ ही दूसरों को भी लाभ मिलेगा। इस दृष्टि से प्रश्नोत्तर कर सकते हैं।

'शंका–समाधान' कार्यक्रम के बारे में कुछ बातें भूमिका के रूप में समझें। दरअसल, इसमें दो हिस्से हैं। एक हिस्सा है– शंका पूछना, और दूसरा हिस्सा है– उसका समाधान करना यानी कि उत्तर देना।

सवाल उठता है कि, इसमें से कौन सा हिस्सा सरल है ? वस्तुतः शंका पूछना सरल है, जबकि उत्तर देना कठिन। सरल काम आपके हिस्से में है, और कठिन काम मेरे हिस्से में है, क्योंकि उत्तर मुझे देना है।

कोई भी काम अगर नियमपूर्वक किया जाए, तो उसमें बहुत लाभ होता ही है। यदि नियम तोड़कर काम करेंगे, तो उससे लाभ तो होगा नहीं, उलटे नुकसान ही होगा। कार्यक्रम 'शंका–समाधान' आपके लाभ के लिये शुरू किया गया है। अतः स्पष्ट है कि –

यदि 'शंका–समाधान' के नियमों का पालन करेंगे, तो बहुत लाभ होगा। इसके विपरीत, विहित नियमों का पालन नहीं करेंगे, तो नुकसान होगा।

भगवान की कृपा से, गुरुजनों के आशीर्वाद से मुझे काफी कुछ सीखने को मिला है। उसके आधार पर मैं आपके प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास करूँगा। पर हम दोनों इस बात का ध्यान रखेंगे कि 'शंका–समाधान' के नियमों का पालन हो।

'शंका–समाधान' के मोटे–मोटे नियम बताता हूँ :–

शंका पूछने वाला व्यक्ति **'जिज्ञासा भाव'** से प्रश्न पूछे कि – ''हम तो बस जानना चाहते है।'' अपनी समस्या को सुलझाने के लिए प्रश्न होना चाहिए। उत्तर देने वाला व्यक्ति भी इसी भावना से उत्तर दे कि सामने वाले की शंका दूर करनी है, उसकी समस्या को सुलझाना है। वह किसी और भावना से उत्तर नहीं दे।

आपकी जो समस्या जहाँ अटकी है, उसको सुलझाने के लिए ही उत्तर दिया जाएगा। उत्तर देने वाला भी इसी भावना से उत्तर दे कि मुझे इसकी शंका का समाधान करना है। जो समस्या अटक रही है, उसको सुलझाना है। उसका मार्ग स्पष्ट करना है, वो कहाँ अटका हुआ है, उसकी वो उलझन दूर करनी है। इस भावना से उत्तर देना चाहिए।

पूछने वाला व्यक्ति कभी–कभी अपनी भावनाएं गलत बना लेता है। ऐसा व्यक्ति सोचता है कि – ''मैं ऐसा प्रश्न पूछूँगा, जिसका सामने वाले को उत्तर ही नहीं सूझे।'' वे लोग गलत सोचते हैं कि ''हम ऐसा कठिन, टेढ़ा–मेढ़ा सवाल पूछेंगे कि सामने वाला जिसका उत्तर ही नहीं दे पाएगा। और जब वो उत्तर नहीं दे पाएगा, तब सब तमाशा देखेंगे। सब लोग उस पर हँसेंगे, तो बड़ा मजा आएगा।'' याद रखें कि ऐसी भावना से प्रश्न पूछने से लाभ नहीं होता, बल्कि नुकसान ही होता है। इसलिए ऐसी भावना से प्रश्न पूछना ठीक नहीं है।

आप भी एक गारंटी दें कि आप प्रश्न 'जिज्ञासा–भाव' से पूछेंगे और मन में कोई गलत उद्देश्य नहीं बनायेंगे।' दुःख देने के लिए, हार–जीत के लिए, सामने वाले को अपमानित करने के लिए, उसको नीचा और अपने को ऊँचा दिखाने के लिए प्रश्न–उत्तर नहीं करना है। मैं आपको अपनी ओर से गारंटी देता हूँ कि, आपकी समस्याओं को सुलझाने के लिए ही आप के प्रश्नों के उत्तर दूँगा। किसी को दुःख देना, अपमानित करना आदि एक प्रतिशत भी मेरा उद्देश्य नहीं है।

कभी–कभी ऐसे प्रश्न भी सामने आ सकते हैं कि पूछने वाले ने एक प्रश्न पूछ लिया और बताने वाले को उत्तर समझ में नहीं आया। वहाँ पर मान–अपमान के कारण उसको झूठ नहीं बोलना चाहिए। उल्टा–पुल्टा कोई भी जवाब दे दें, ऐसा भी नहीं करना चाहिए। उत्तर नहीं सूझता तो साफ बोल दें – ''भई, हमको उत्तर समझ में नहीं आया।''

पहले से मेरा स्पष्टीकरण सुन लीजिए। उत्तर मालूम है तो बता देंगे, नहीं मालूम तो साफ बोल देंगे कि, नहीं आता। झूठ नहीं बोलेंगे, जानबूझकर धोखा नहीं देंगे, यह गारंटी है। उत्तर आता नहीं है और तोड़मरोड़ करते रहें, ऐसा काम हमें नहीं आता है। ऐसा करना यम–नियम के विरुद्ध है।

गुरुजी ने मुझे बहुत मजबूत बना दिया है। इसलिए मुझे तो कोई फर्क नहीं पड़ता। जिस प्रश्न का उत्तर मुझे नहीं पता है, मैं तो साफ बोल देता हूँ कि इस प्रश्न का उत्तर मुझे नहीं आता। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर देने की कोई गारंटी नहीं है।

जिस प्रश्न का उत्तर मुझे नहीं आता तो भविष्य में और पढ़ेंगे, सीखेंगे और कभी उत्तर समझ में आ जाएगा तो फिर आपको बताएंगे। जितना समझ में आएगा, उतना बता देंगे। यह हमारी ओर से गारंटी है। पक्की बात बताएंगे, पूरा जोर लगाएंगे।

हम बुद्धि से, तर्क से, शास्त्रों के आधार पर प्रामाणिक बात बताएंगे, ठीक बताएंगे, धोखा नहीं देंगे, छल नहीं करेंगे, गलत उत्तर नहीं देंगे। हाँ, अनजाने में कोई भूल हो जाए, तो वो एक अलग बात है।

अज्ञानतावाश कोई भूल हो गई, बाद में समझ में आ गई कि, यह तो गलत बात कह दी, तो उसका सुधार कर उसको ठीक कर देंगे। हम जानबूझकर गलत बात नहीं कहेंगे।

योग–शिविर में प्रश्न लिखकर भेजे तो अच्छा रहेगा। प्रश्न पूछने वाले प्रश्न के नीचे अपना नाम अवश्य लिखें, जिससे कि जरूरत पड़े तो पूछा जा सके कि– ''भई, यह प्रश्न तो मुझे समझ में नहीं आया। इसका स्पष्टीकरण दीजिए।''

हो सकता है कि, आपके विचारों और हमारे विचारों में अंतर हो। कई बातों में विरोध भी हो सकता है, टकराव हो सकता है, लेकिन कोई बात नहीं। आपने अब तक जैसा सुना–सीखा, आप वैसी बात जानते–मानते हैं। परस्पर कुछ विचारों में अंतर हो सकता है। उसकी कोई चिंता नहीं। फिर भी आप प्रेमपूर्वक अपनी शंका पूछें और उतने ही प्रेमपूर्वक उसका उत्तर भी सुनें।

मान लो कि कोई बात आपने 20–30 साल से सुन रखी है, और वो बात आपको ठीक लगती है। और हमने यहाँ उसके विरुद्ध कोई बात बता दी कि, यह बात ठीक नहीं है। अतः आपको हमारी वो बात जँचती नहीं है।

आपको बात समझ में नहीं आई तो कोई बात नहीं। उसके दो विकल्प हैं। पहला या तो अलग से बैठकर कुछ विस्तार से बातचीत कर लेंगे। आगे और बताने का प्रयास करेंगे, प्रमाण देंगे, तर्क देंगे। हो सकता है कि बात कुछ समझ में आ जाए।

समझाने पर भी समझ में नहीं आया तो झगड़ा नहीं करेंगे। आपकी ओर से भी ऐसी गारंटी चाहिए कि आप भी झगड़ा नहीं करेंगे, झगड़े के लिए प्रश्न नहीं पूछेंगे। आप केवल जिज्ञासा–भाव से प्रश्न पूछेंगे।

दूसरा विकल्प है – जो बात समझ में नहीं आई, उसको साइड में विचाराधीन (पेंडिंग) के रूप में रख दें। आगे उस पर और विचार करते रहेंगे। जरूरी नहीं कि हर बात आपको समझ में आ ही जाए। आपने प्रश्न पूछा, हमने उत्तर दिया। हम इस बात की कोई गारंटी नहीं लेते कि आपको हमारी सारी बातें आज ही समझ में आ जाएंगी। ऐसा बिलकुल नहीं होगा।

कुछ ऐसी बातें होती हैं, जिनको समझने में समय लगता है। जो बात समझ में न आये, तो कोई बात नहीं। यह न कहें कि, आपका उत्तर गलत है। आपका यह कहना अनुचित है। यह आपका अधिकार नहीं है।

अगर आप मुझसे यह कहते हैं कि 'आपका उत्तर गलत है', तो इसका मतलब यही हुआ कि सही उत्तर क्या है, वह आप पहले से जानते हैं। और जब आप सही उत्तर जानते हैं, तो फिर प्रश्न पूछा क्यों? मेरी परीक्षा लेने के लिए नहीं आए आप। यह गलत बात है। यदि आप परीक्षा लेने की भावना से प्रश्न पूछेंगे, तो आपको नुकसान हो सकता है। इसलिए परीक्षा लेने के उद्देश्य से कोई प्रश्न न पूछें। अपनी समस्या को सुलझाने के लिए पूछें और इसी भावना से मैं आपको प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास करूँगा।

उत्तर समझ में आया तो बहुत अच्छा, नहीं आया तो चिंतन करें, विचार करें। जो लोग कुछ स्वाध्याय करते हैं, शास्त्रों को पढ़ते हैं, अध्ययन करते हैं, कुछ पृष्ठभूमि बनी हुई है, उनको हमारी बात जल्दी समझ में आएगी।

जो स्वाध्याय नहीं करते, सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, दर्शन, उपनिषद्, वेद, मनुस्मृति आदि ग्रन्थों का अध्ययन नहीं करते, तो उनको बात समझने में देर लगेगी। उनका

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

**पूछने वाला व्यक्ति कभी–कभी अपनी भावनाएं गलत बना लेता है। ऐसा व्यक्ति सोचता है कि – ''मैं ऐसा प्रश्न पूछूँगा, जिसका सामने वाले को उत्तर ही नहीं सूझे।'' वे लोग गलत सोचते हैं कि ''हम ऐसा कठिन, टेढ़ा–मेढ़ा सवाल पूछेंगे कि सामने वाला जिसका उत्तर ही नहीं दे पाएगा। और जब वो उत्तर नहीं दे पाएगा, तब सब तमाशा देखेंगे। सब लोग उस पर हँसेंगे, तो बड़ा मजा आएगा।'' याद रखें कि ऐसी भावना से प्रश्न पूछने से लाभ नहीं होता, बल्कि नुकसान ही होता है। इसलिए ऐसी भावना से प्रश्न पूछना ठीक नहीं है।**

thearyasamaj.org



☞ पृष्ठ 4 का शेष

# वेद में मांस–भक्षण...

अर्थात् सत्यनिष्ठ विद्वान् लोग यज्ञों द्वारा ही पूजनीय परमेश्वर की पूजा करते हैं। यज्ञ में समस्त धर्म की क्रियाओं का समावेश है। यज्ञ द्वारा परमात्मा की पूजा करने वाले विद्वानों को वह दु:खरहित मोक्ष प्राप्त होता है जिसमें समस्त ज्ञानी लोग रहते हैं...इसके विपरीत यज्ञ न करने वालों के बारे में वेद कहता है–**न ये शेकुर्यज्ञियां नावमारूहम् ईमैंव ते न्यविशन्त केपय:।** (अथर्व. 20–94–6) अर्थात् जो यज्ञमयी नौका पर चढ़ने में समर्थ नहीं होते वे कुत्सित, अपवित्र आचरण वाले होकर यहीं इस लोक में नीचे को ही गिरते जाते हैं। शतपथ ब्रा. (1–7–45) में कहा है–**'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म'** अर्थात् यज्ञ श्रेष्ठतम् कर्म है फिर भी यज्ञों में नशीले पदार्थों, गौ, अश्व, बकरे और नरबलि की कल्पनाएं कैसे कर दीं यह सोच कर ही आश्चर्य होता है। वास्तविकता यह है कि यज्ञ के बारे में जो भी शब्द आए हैं उन में से किसी का भी अर्थ पशुबत्त्ध या हिंसा नहीं है बल्कि 'अध्वर' शब्द अहिंसा का ही सूचक है। यज्ञ कराने के लिए जिन लोगों की नियुक्ति की जाती है उनमें से एक का नाम 'अध्वर्यु' है जो यज्ञ को कायिक, वाचिक और मानसिक प्रकार की हिंसाओं से बचाता है। यज्ञ में गौ बध की कल्पना करना ही अप्रासंगिक और निंदनीय है क्योंकि गाय को तो 'अघ्नया' कहा गया अर्थात् किसी भी हालत में न मारने योग्य। इसी प्रकार अश्वमेध यज्ञ के बारे में भी अज्ञानतावश ऐसा कह दिया जाता है कि इसमें अश्व की बलि दी जाती थी मगर यजुर्वेद के बाइसवें से पच्चीसवें अध्याय तक अश्वमेध की चर्चा हुई है उसमें इस प्रकार की अनर्गल बात बिल्कुल ही नहीं कही गई है। फिर भी इस प्रकार का कर्मकाण्ड प्रधान अति अश्लील भाष्य कुछ भाष्यकारों द्वारा किया गया जो किसी भी सभ्य समाज को मान्य नहीं हो सकता है। महर्षि दयानंद सरस्वती जी अपने ग्रंथ ऋ.भा.भु. में शतपथ ब्रा. का प्रमाण देते हुए कहते हैं–**'राष्ट्र वा अश्वमेध:'** (13–1–6–3)। इस आधार पर वे आगे लिखते हैं–**'राष्ट्र पालनमेव क्षत्रियाणाम् अश्वमेधाख्यो यज्ञो भवति, नार्श्व हत्वा तदङ्गान होमकरणं चेति:।** अर्थात् राष्ट्र का पालन करना ही क्षत्रियों का अवश्वमेध यज्ञ है, घोड़े को मारकर उसके अंगों को होम करना नहीं। महर्षि जी सत्यार्थ प्रकाश में अश्वमेध, गोमेध और नरमेध आदि के बारे में लिखते है–**'राष्ट्र वा अश्वमेध:। (शत. 13–1–6–3), अन्नं हि गौ:। (शत 4–3–1–25), अग्निर्वा अश्व:। (शत. 3–6–2–5), आज्यं मेध:। (शत:13–3–6–2)** घोड़े गाय आदि पशु तथा मनुष्य मारकर होम करना कहीं नहीं लिखा। केवल वाममार्गियों ने प्रक्षेप किया है। देखो, राजा न्याय धर्म से प्रजा का पालन करे, विद्यादि का देने हारा यजमान और अग्नि में भी घी आदि का होम करना 'अश्वमेध'। अन्न, इन्द्रियां, किरण, पृथिवी आदि को पवित्र रखना 'गोमेध', जब मनुष्य पर जाय तब उसके शरीर का विधिपूर्वक दाह करना 'नरमेध'। गौ आदि शब्दों के रूढ़ अर्थों को आधार लेकर वेद मंत्रों के लिए गए अर्थों का कुपरिणाम हमारे सामने है।

इसी प्रकार के अन्य और भी अनेक शब्द हैं जिनके बारे में लोगों को बहुत भ्रान्तियाँ है। ऋग्वेद के नौवें अध्याय के अनेक सूक्तों में सोमलता नामक एक औषधि का वर्णन आता है जिसे कुछ लोगों ने अज्ञानतावश नशीले पदार्थ के रूप में प्रचारित किया है। यहां पर इस सोम का नाम वृषभ भी बताया गया है। सोम शब्द वेद में आत्मा, राजा, चंद्रमा, औषधि, जल, अंतरिक्ष, पृथ्वी, आकाश, अग्नि, सूर्य, वायु, वीर्य आदि अनेक अर्थों के रूप में प्रयुक्त हुआ है। कहीं–कहीं इस शब्द का प्रयोग परमात्मा के आनंद के रूप में भी हुआ है। वृषभ शब्द का अर्थ भी केवल बैल करना संगत नहीं है। अथर्व. (4–11–1) में अनड्वान् के रूप में चार पैरों वाले एक ऐसे बैल का वर्णन किया गया है जो इंद्र का है तथा उसके वे पैर वास्तव में वैश्वानरख तैजस, प्राज्ञ और अद्वैत हैं। छान्दोग्य उप. के अनुसार ये चार पाद प्रकाशमान, अनंन्दवान्, ज्योतिष्मान और आयतनवान् बताए गए हैं। यजुर्वेद (17–91) में एक अद्भुत वृषभ का वर्णन आया है, जिसके चार सींग तीन पैर दो सिर और सात हाथ हैं। वह तीन खूंटों से बंधा हुआ डकरा रहा है। वह महान् देव है जो सब व्यक्तियों के अंदर आकर प्रविष्ट है। इस वृषभ का उल्लेख ऋग्वेद (4–58–3) में भी है। निरुक्त के अनुसार यह वृषभ यज्ञ है। चार वेद ही उसके चार सींग हैं। प्रातः, मध्याह्न और सायं के तीन सेवन ही तीन पैर हैं। प्रायणीय तथा उदयनीय उसके दो सिर हैं। गायत्र्यादि सात छंद ही हाथ हैं। वह यज्ञ मंत्र, ब्राह्मण तथा कल्प इन तीन खूंटों से बंधा हुआ है। यज्ञ में होने वाला मंत्र पाठ ही उस वृषभ का डकराना है। पतंजलि जी महाराज के अनुसार यह वृषभ 'शब्द' है। शब्द के चार भेद नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात ही उसके चार सींग हैं। भूत, भविष्य और वर्तमान काल ही तीन पैर हैं। सुप् और तिङ् दो सिर हैं। सात विभक्तियां सात हाथ हैं। उरस् कंठ और सिर इन तीन स्थानों में बंधा हुआ वह बोल रहा है...। ऋग्वेद (9–86–43) में वृषभ पाक का वर्णन है जिसे अज्ञानी लोगों ने बैल के मांस आदि से जोड़ने का प्रयास किया है जबकि यहां वृषभ का भाव धाना (यव) तथा सोमवल्ली है। यहां पर यह बात भी उल्लेखनीय है कि ऋग्वेद के अन्त:साक्ष्य के आधार पर ही इंद्र का भोज्य धाना (भुने जौ), करंभ (दही मिश्रित सत्तू) और पुरोडास है तथा पेय सोमरस है–बैल का मांस नहीं। वेद में (ऋ.8–31–1,4) इंद्र को पुरोडास और परिपक्व सोम भेंट करने का ही उल्लेख है, बैल खिलाने का नहीं। राजनिघण्टु में वृषभ शब्द का प्रयोग काकड़ासिंगी नामक औषधि के लिए आया है। कुछ तथाकथित विद्वानों ने आर्य लोगों द्वारा भैंस आदि का मांस खाने का उल्लेख भी किया है। इसके लिए वे ऋग्वेद (5–29–7) के मंत्र को उधृत करते हैं जहां...**महिषा त्री शतानि**, आया है। महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने इस मंत्र में आए महिषा शब्द का अर्थ 'बड़ा' किया है। निघण्टु के अनुसार भी इसका अर्थ महान् या बड़ा ही है। इसी प्रकार अन्य अनेक प्रकार के आक्षेप समय–समय पर वेद के बारे में किए जाते रहे हैं मगर उसका कारण वेद की मूल भावनाओं को न समझ पाना, योगिकवाद की अवहेलना, निरुक्त आदि का ज्ञान न होना तथा पूर्वा पर प्रसंग आदि का ध्यान न रखना ही मुख्यत: है।

वेद में गाय–बैल, भैंस, बकरे, घोड़े आदि के मांस खाने की बात तो दूर रही जीव मात्र के मांसभक्षण का कड़े शब्दों मे विरोध किया गया है क्योंकि मांस मनुष्य का भोजन है ही नहीं। इसी प्रकार किसी प्रकार के नशीले पदार्थ के सेवन की बात भी परमात्मा द्वारा दिए गए ज्ञान में क्योंकर हो सकती है, जिससे बुद्धि का विनाश होता है। वेद (ऋ. 10–16–9, अथर्व 12–2–7) में साफ लिखा है कि मैं मांस खानेवाली अग्नि को दूर करता हूं। वह पाप ढोने वाली है...यहां दूसरी ही अग्नि जो सब को जानी हुई और देवों के लिए हवि ढोने वाली है, उसे रखता हूं। जो मांस भक्षक अग्नि तुम्हारे घरों में प्रवेश करती है, उसको पितृयज्ञ के लिए दूर करता हूं...तुम्हारे घरों में दूसरी ही अग्नि को देखना चाहता हूं। वही उत्तम स्थानों में धर्म को प्राप्त हो। जिन मंत्रों का उल्लेख कुछ विरोधियों द्वारा मांस भक्षण के पक्ष में दिया जाता है वास्तविकता यह है कि उन मंत्रों (ऋ.4–18–13, 10–27–2, अथर्व. 4–17–6, 9–6–39, 6–70–1, 18–4–20, 18–4–32) में अनेक प्रकार की पौष्टिक औषधियों का वर्णन किया गया है। वेद में अनेकों मंत्र ऐसे हैं जिनमें मांस खाने का निषेध किया गया है। ऋग्वेद (7–32–9, 10–87–16, 7–104–2) तथा यजुर्वेद (12–32, 36–18) और अथर्ववेद (3–28–1, 19–48–5, 8–6–23) आदि मंत्र इस संबंध में पठनीय हैं। आर्य लोग पशुओं को पालने वाले होते थे न कि उन्हें मारने वाले। यजुर्वेद का एक मंत्र द्रष्टव्य है–**पशून् पाहि, गां मा हिंसी:, अजां मा हिंसी:, अविं मा हिंसी:। इमं मा हिंसीर्द्विपादं पशुं, मा हिंसीरेकशफं पशुं, मा हिंस्यात् सर्वाभूतानि।।** अर्थात् पशुओं की रक्षा करो, गाय को मत मारो, बकरी को मत मारो, भेड़ को मत मारो, इस मनुष्य और द्विपद पक्षियों को मत मारो, एक खुर वाले घोड़े, गधे को मत मारो और किसी भी प्राणी को मत मारो। वेद में अन्य भी अनेक ऐसे मंत्र हैं जिनमें प्राणिमात्र के प्रति मित्र की दृष्टि रखने की बात कही गई है–**दृते दृ ह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।।** (यजु. 36–18) अर्थात् हे अज्ञानान्धकार नाशक प्रभो! मुझे सब प्राणी मित्र की दृष्टि से देखें, मैं भी सब प्राणियों को मित्र की प्रेममय दृष्टि से देखूं, हम सब आपस में एक–दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें। यहीं नहीं अन्यत्र भी कहा है–**'पशुन्पाहि'** (यजु. 1–1) पशुओं की रक्षा कर , **'पशूंस्त्रायेथाम्'** (यजु. 6–11) पशुओं की रक्षा करो, **'द्विपादव चतुष्पात् पाहि'** (यजु. 14–8) दो पैर वाले मनुष्यादि की रक्षा कर और चार पैर वाले पशुओं की भी सदा रक्षा कर। ऋ. (7–32–9), अथर्व. (6–70–, 3–28–, 19–48–5, 8–6–23, 5–29–10) आदि ऐस सैकड़ों ही मंत्र वेद में आए हैं जिनमें प्राणी मात्र के प्रति दया और प्रेम की भावना रखने का निर्देश दिया गया है। इसी प्रकार शराबादि नशीली वस्तुओं का भी वेद में (ऋ.7–41–1, 8–2–12, यजु. 19–7, सा. 6–2–4 उत्तरार्चिका, अथर्व. 20–114–2) निषेध किया गया है।

महादेव, सुन्दरवन,
हि.प्र.–174401

thearyasamaj.org



# युवा संन्यासी स्वामी विवेकानन्द तथा क्रान्तिकारियों के आद्य पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा की मुलाकात–अद्भुत क्षण थे

● डॉ. भवानीलाल भारतीय

स्वातंत्र्य क्रान्ति का शंखनाद करने वाले पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा का जन्म क्रान्ति वर्ष 1857 की चार अक्टूबर को कच्छ के एक व्यवसायी के यहां हुआ था। युवा काल में वे ऋषि दयानन्द के सम्पर्क में आये, उनसे संस्कृत पढ़ी और प्रसिद्ध विद्या विशारद प्रो. मोनियर विलियम्स की प्रेरणा से इंग्लैंड जाकर संस्कृत का अध्यापन किया, साथ ही बैरिस्टर बने। कालान्तर में इण्डिया हाउस की स्थापना राजधानी लन्दन में की जो आगे चल कर सावरकर, मदनलाल धींगड़ा, भिकाई जी कामा आदि क्रान्तिकारियों का शरणगाह बना।

इंग्लैण्ड जाने के पहले श्याम जी ने कुछ काल तक अजमेर में वकालत भी की। इसी समय उनकी मुलाकात स्वामी विवेकानन्द से हुई। वे संन्यास ग्रहण के पश्चात् भारत भ्रमण करते हुए अजमेर आये थे। 1891 में स्वामी विवेकानन्द ने आबू पर्वत ठाकुर मुकुन्द सिंह के घर पर निवास किया था। यही समय था जब अजमेर के आर्य नेता हरविलास शारदा ठाकुर मुकुन्द सिंह से मिलने आबू आये। स्वामी विवेकानन्द के तेजस्वी स्वरूप तथा उनकी प्रबल देशभक्ति ने शारदा जी को अत्यधिक प्रभावित किया। दोनों के बीच विस्तृत विमर्श होता रहा। शारदा जी ने स्वामीजी को अजमेर आने का निमंत्रण दिया और अपने घर पर ही ठहरने का अनुरोध किया। स्मरण रहे कि तब तक स्वामी जी को राष्ट्र व्यापी ख्याति नहीं मिली थी। 1891 का वर्ष और दिसम्बर का महीना। स्वामी जी खेतड़ी से अचानक अजमेर आये और हरविलास शारदा के घर आये। वार्तालाप के प्रसंग में स्वामी जी को उन्होंने पं. श्याम जी के बारे में बताया और कहा कि वे संस्कृत के प्रौढ़ विद्वान् हैं। आबू से लौटकर शारदा जी ने श्याम जी को स्वामी विवेकानन्द का परिचय दिया और उनकी धर्म प्रचार की लगन तथा देशभक्ति की चर्चा की। साथ ही यह भी कहा कि वे आपसे मिलना चाहते हैं। स्वामी जी ने शारदा जी के यहां तीन दिन तक निवास किया, तत्पश्चात ब्यावर चले गये। उनके अजमेर से ब्यावर जाने के दो दिन बाद श्यामजी मुम्बई से अजमेर लौट आये और अपने मित्र शारदा जी से मिलने गये। वे भी स्वामी जी से मिलने के लिए उत्सुक थे। स्वामी जी के ब्यावर चले जाने का समाचार श्याम जी को मिला तो वे ब्यावर जा पहुंचे और उसी दिन उन्हें लेकर अजमेर आ गये। उन्होंने स्वामी जी को अपने बंगले पर ही ठहराया।

स्वामी जी का श्याम जी के यहां लगभग पन्द्रह दिनों तक निवास रहा। अब ये तीनों व्यक्ति–हर विलास शारदा, स्वामी विवेकानन्द तथा श्याम जी संध्या समय घूमने निकलते और विभिन्न विषयों पर चर्चा करते। उनकी विवेचना के विषय होते–हिन्दू धर्म की वर्तमान दुर्दशा, सामाजिक स्थितियां, संस्कृत भाषा, अध्यात्म तथा वेद वेदान्तादि दार्शनिक विषय। स्वामी जी श्याम जी के संस्कृत वैदुष्य पर मुग्ध थे। श्याम जी भी स्वामी जी के धर्म प्रेम, विशद धर्म ज्ञान, स्वदेश प्रेम तथा भारत भक्ति से प्रभावित थे। उन्हें इस बात का गर्व था कि वे स्वामी दयानन्द तथा स्वामी विवेकानन्द जैसे दो तेजस्वी संन्यासियों के सम्पर्क में आये हैं। श्याम जी तथा शारदा जी के सान्नि में दो सप्ताह बिताकर विवेकानन्द ने गुजरात की ओर प्रस्थान किया। स्वल्प समय बाद श्याम जी ने भी वकालत छोड़ दी और बाद में वे रतलाम तथा जूनागढ़ राज्यों में उच्च पद पर कार्य करते रहे। अन्ततः 1897 में इंग्लैण्ड चले गये और क्रान्तिकारियों के गुरु बने।

315 शंकर कालोनी, श्रीगंगानगर

---

☞ पृष्ठ 6 का शेष

# शिवभक्त! पहचानें कौन...

उत्पन्न हुए अन्न से वृद्धि को प्राप्त होते हैं। अन्न खाया जाता है और वह खाया जाता हुआ भूतों को खा लेता है। अतः यह **ईश्वर अन्न** कहा जाता है।

तात्पर्य हुआ जो अन्नपति है, शिव है, विश्वनाथ है, अन्नरूप है, जो उपासकों द्वारा उपासना रूप में, समाधि में खाया जाता है, ग्रहण किया जाता है। भूतों को उत्पन्न करता है, बढ़ाता है, वह अन्न रूप अन्नपति अन्त में **अत्ति**=भूतों का खाता भी है, अर्थात् प्रलय में समाहित भी कर देता है। इसीलिए अन्नरूप परमात्मा का मिलता जुलता एक नाम **अन्नाद** भी है। अथर्व मन्त्र है–

**यो अन्नादो अन्नपतिर्बभूव ब्रह्मणस्पतिरुत यः।**
**भूतो भविष्यद् भुवनस्य यस्पतिः॥**

अथर्व. 13/3/7॥

अर्थात् **यः**=जो, **अन्नादः**=चराचर का ध्वंसक, **अन्नपतिः**=अन्नों का स्वामी, **उत**=और, **यः**=जो, **ब्रह्मणस्पतिः**=वेदज्ञान व सर्वज्ञानों का स्वामी, **बभूव**=है, था, होगा, **यः**=जो, **भुवनस्य, पतिः**=उत्पन्न हुए जगत् का स्वामी है, वही **भूतः**=पहले था, वही आगे भी, **भविष्यत्**=रहेगा।

मन्त्र का निष्कर्ष है कि परमेश्वर जहाँ अन्न है, प्राण धारण कराने वाला है वहीं वह आन्नाद है। समस्त जड़ चेतन जगत् का लय प्रलय करने वाला है। वह ही हमारे काल विभाग की दृष्टि से वर्तमान, भूत, भविष्यत् तीनों कालों का स्वामी है, अधिपति है। उसकी व्यवस्था से कोई भी पाप, अधर्म आदि करने वाला बच नहीं सकता।

**फाल्गुन मास** के इस **शिवरात्रि** पर्व पर वर्षों पूर्व परमेश्वर के इस अन्नाद रूप को बखूबी=पूर्णरूपेण जानने समझने का प्रयास व प्रण सर्व प्रथम गुजरात के टंकारा ग्राम में उत्पन्न **मूलशंकर महर्षि दयानन्द** ने किया था। महर्षि ने प्रण मात्र ही नहीं किया था, वे उसमें सफल भी हुए।

महर्षि दयानन्द ने ईश्वर के अनेक गुण, कर्म, स्वभावों का विश्लेषण 101 नामों के माध्यम से अपने **अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश** के प्रथम समुल्लास में किया है। उन ईश्वर नामों के मध्य ईश्वर के **अन्नस्वरूप=अन्नाद रूप** को भी व्याख्यात किया है।

यथा–

**अद, भक्षणे इस धातु से अन्न शब्द सिद्ध होता है।**

**अद्यतेऽत्ति च भूतानि तस्मादन्नं तदुच्यते।** तै.उप.2/2॥

**अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्।**
**अहमन्नादोऽहमन्नादोऽहमन्नदः।**

तै.उप. 3/10/6॥

**अत्ता चराऽचरग्रहणात्।** वेदा.द. 1/2/3॥ यह व्यासमुनिकृत शारीरिक सूत्र है।

**जो सबको भीतर रखने, सबको ग्रहण करने योग्य चराचर जगत् का ग्रहण करने वाला है, इससे ईश्वर के 'अन्न', 'अन्नाद' और 'अत्ता' नाम हैं। और जो इसमें 3 बार पाठ है सो आदर के लिए है। जैसे गूलर के फल में कृमि उत्पन्न होके उसी में रहते और नष्ट हो जाते हैं वैसे परमेश्वर के बीच सब जगत् की अवस्था है।**

सत्या. प्र., पृ. 18॥

इस प्रकार महर्षि के वचन से स्पष्ट है कि ओंकार परमेश्वर जहाँ शिव है, कल्याणकारी है, विश्वनाथ है, वहीं वह **अन्न, अन्नाद** व **अत्ता** स्वरूप वाला भी है। वह ही जगत् को बनाता है, और वह ही जगत् को समेटता भी है। सब लोक लोकान्तर परमेश्वर में ही स्थित हैं उसके शासन में हैं, वह ही सबका धारक और संहारक है। परमेश्वर के धारक स्वरूप के साथ संहारक स्वरूप को जानना नितान्त आवश्यक है। ऐसा न हो **मीठा–मीठा गप्प, कड़वा–कड़वा थू। यदि परमेश्वर के अन्न=मीठे फल** के साथ **कटु=अन्नाद** स्वरूप को नहीं समझा, तो जीवन पाप, अधर्म, अत्याचार, भ्रष्टाचार से सदा लिप्त रहेगा, छुटकारा नहीं होगा।

ईश्वर मुख से वेद में कहा है–

**अहमन्नमन्नमदन्तमद्मि।**

अर्थात् **अहम् अन्नम्**=मैं अन्न हूँ, जीव मेरा ही सेवन करता है, मेरी ही उपासना करता है, इसके विपरीत जो केवल भोगों में फँस जाता है, नाना स्वादु अन्नों के खाने में लगा है उस–उस **अन्नम् अदन्तम्**=खाने वाले को **अद्मि**=खा लेता हूँ। मैं जहाँ शिव हूँ वहीं रुद्र हूँ। स्वादु अन्न में लगे अन्त में मात्र रोते हैं, भोगों में फँसना ठीक नहीं, **भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ताः**, वैरा. श. 3/8। अन्नपति, अन्नाद का ज्ञान ही लाभकारी है।

महर्षि ने शिवरात्रि पर्व के अवसर पर शिव, ओम् के **अन्न, अन्नाद, अत्ता** स्वरूप को जानने, समझने का प्रण लेकर जगत् की आँखे खोली हैं कि वह ईश्वर के सही स्वरूप को समझें। विश्वनाथ मन्दिर आदि में प्रतिष्ठित शिवलिंग, जगत्पति, विश्वपति, अन्नपति नहीं है, क्योंकि जो हाथ पैर वाला है, वह सीमित है, तो अन्न, धन भी उसका सीमित होगा, वह अन्नपति, विश्वनाथ नहीं हो सकता। विश्वनाथ, अन्नपति, जगत्पति ईश्वर तो वह असीम, निराकार स्वरूप वाला है जो सबका है, सब में समाया है, सब से दूर भी है, सब के समीप भी है। वही विश्व है, विश्वनाथ है, अन्न का दाता है, मालामाल है, शिव है, ओम् है। **शिवभक्त! पहचानें कौन है मालामाल!!!**

सम्पर्क सूत्र–आर्य कन्या गुरुकुल, शिवगंज, जि. सिरोही–307027 (राज.)

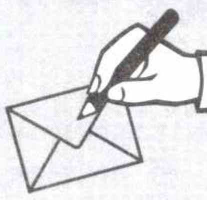

# पत्र/कविता

## भारत रतन हंसराज

तेरे त्याग की अजमतों को नमन है, तेरे दर से ऊंचा न कोई गगन है।
मेरे देश के हुक्मरां कुछ विचारो, हंसराज सा कौन भारत रतन है।।

दयानन्द का कार्य आगे बढ़ाया, अज्ञानता का अंधेरा मिटाया।
आदर्श तेरी यह अद्भुत लगन है, हंसराज सा कौन भारत रतन है।।

वंचित को अवसर की ज्योति दिखाना, मिटा भेद भाव गले से लगाना।
तेरे गीत गाती गंगो जमन है, हंसराज सा कौन भारत रतन है।।

परोपकार और वेद प्रचार तेरा, सदा याद रखेगा संसार तेरा।
मिटा तेरे जीवन का आवागमन है, हंसराज सा कौन भारत रतन है।।

डी.ए.वी. को जीवन का वरदान देकर, अमर हो गये तुम बलिदान देकर।
तू आर्य रतन है, तू मानव रतन है, हंसराज सा कौन मानव रतन है।।

तेरी सभ्यता पर कोई शोध करता, समर्पण का तेरे कोई बोध करता।
निर्मल कहां तुमसा अन्तः करण है, तेरे त्याग की अजमतों को नमन है।।

तेरी सादगी का उदाहरण कहाँ है दुखियों का संकट निवारण कहाँ है।
तेरा नाम लेकर पवित्र आचरण है, हंसराज सा कौन भारत रतन है।

न्योछावर है दुनिया के सम्मान सारे, तेर ऋण न जायें किसी से उतारे।
तू मानव रतन है, तुम्हें शत् नमन है, हंसराज सा कौन भारत रतन है।।

तुम्हारी बुलन्दी को छूने के काबिल, किसी का न तन है किसी का न मन है।
तेरे दर से ऊंचा न कोई गगन है, हंसराज सा कौन भारत रतन है।।

**हरवंश लाल कपूर**
**भूतपूर्व सहमंत्री**
**आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली**

## संगठित होकर वैदिक मन्तव्यों का प्रचार प्रसार करें

डी.ए.वी. विश्वविद्यालय (जालन्धर) के आरम्भ होने पर प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के प्रधान तथा समस्त आर्य जगत् को बधाई।

महर्षि दयानन्द का संसार पर बड़ा उपकार है। वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है; वेद का पढ़ना पढ़ाना सब। आर्यो का परम धर्म है। यह स्थापना महर्षि दयानन्द ने ही दी थी। उन्हीं के कारण, तथा आर्य समाज के प्रचार–प्रसार के कारण वेद विश्व में सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर सके हैं आज यूनेस्को ने भी वेद को विश्व की प्राचीनतम विरासत में शामिल कर किया है। विश्व संस्कृत सम्मेलन में (दिल्ली में सम्पन्न) सबसे पहले वेद विषय पर चर्चा होती है। ऑल इंडिया ओरियन्टल कान्फ्रेंस (पूना) हो या विश्व ओरियन्टल कान्फ्रेंस हो उसमें सर्वप्रथम वेद या वैदिक विषय का उल्लेख होता है। धर्म, दर्शन, साहित्य, इतिहास आदि कोई विषय हो, उसकी चर्चा वेद से आरम्भ होती है। ज्ञान विज्ञान का कोई क्षेत्र हो उसका स्रोत वेद में ढूँढ़ा जाता है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने संक्षेप से इन विषयों का संकेत ''ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका'' नामक ग्रन्थ में किया है।

डी.ए.वी. प्रवन्धक समिति ने वेदों पर अंग्रेज़ी भाष्य प्रकाशित किया है। सार्वदेशिक सभा ने भी पं धर्मदेव विद्यामार्तण्ड का अंग्रेजी भाष्य छापा है।

आर्य समाज के इलावा भारत में वेदों को लेकर कई भाष्य छपे हैं। कई संस्थायें और विदान् वेदों पर शोध करने में एवं ग्रन्थ छापने में लगे हैं। भारत से बाहर भी संस्कृत एवं प्राच्यविद्या आदि में रुचि रखने वाले विद्वान् वेदों पर शोध कर रहे हैं। वी. वी.आर.आई. तथा वी.वी.आई एस.आई (V.V.I.S.I) साधु आश्रम होशियारपुर से कई जिल्दों में प्रकाशित ''Vedic Concordenlce ''ग्रन्थमाला द्रष्टव्य है इसका सामूहिक श्रेय महर्षि दयानन्द, आर्य समाज एवं डी.ए.वी. संस्थाओं के जाता है। आर्यजन, आर्य समाज संगठित होकर वेद का वैदिक मन्तव्यों का प्रचार–प्रसार करें आज इसकी बड़ी आवश्यकता है।

**प्रो चन्द्रप्रकाश आर्य**
**432/आर्य निवास करनाल**

**********

## संस्कार कराने वाले पुरोहित ध्यान रखें क्या कलाई पर मौली वांधना उचित है?

मुगल वादशाह औरंगजेब के राज्य के समय कशमीरी पंडितों का एक दल दिल्ली आया तथा गुरुतेगवहादुर से मिलकर बताया कि ''हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया जा रहा है तथा लोगों के यज्ञोपवीत भी उतारे जा रहे हैं। आप हमारी रक्षा करें।'' तब गुरु जी ने इस कुकृत्य का विरोध किया जिस पर उनका सिर काट दिया गया। उस समय पडितों ने यज्ञोपवीत (जनेऊ) के विकल्प के रूप में कलाई पर मौली बांधने का तरीका निकाला तथा प्रत्येक धार्मिक कृत्य के समय सब पुरुषों तथा महिलाओं के दाहिने हाथ की कलाई पर मौली बंधन होने लगा जिसमें तीन धागे होने चाहियें। यज्ञोपवीत भी तीन धागों का ही होता है क्योंकि संसार में प्रत्येक व्यक्ति के तीन कर्तव्य होते हैं जिनका पालन करना आवश्यक होता है। पहला कर्तव्य ईश्वर को हमेशा याद रखना, दूसरा कर्तव्य ऋषि मुनियों गुरु इत्यादि की सेवा तथा तीसरा कर्तव्य मातापिता तथा अन्य बड़ों का सम्मान तथा सेवा करना। आजकल लोगों ने यज्ञोपवीत पहनना अपने आप ही छोड़ रखा है। इसलिये सब मनुष्यों को यज्ञादि शुभ कार्य करने से पहले मौली बांधनी उचित है। जो लोग यज्ञोपवीत पहने रखने को उद्यत हो उन्हें ही पहनाये जायें। आजकल धार्मिक कृत्य के बाद यज्ञोपवीत उतार देते हैं जो अनुचित है। इसलिये हवन यज्ञ तथा अन्य संस्कार करवाने वाले पुरोहित इस का ध्यान रखें।

**अश्विनी कुमार पाठक सी 233**
**नानक पुरा नई दिल्ली**

**********

## हिन्दुओं के पतन का कारण अन्धी श्रद्धा

इन हिन्दुओं को कौन समझायेगा जो अपने 33 तैतीस कोटि के देवताओं को छोड़ कर कबरों पर जाकर सिर पटकते हैं। बृहस्पतिवार के दिन देखो अनेक स्थानों पर जहाँ पास कबरें बनी हुई होती हैं हिन्दु भाई बहिनों की लाइन लगी हुई होती है। कबरों पर दीया जलाकर कुछ प्रसाद चढ़ा कर अपनी मुराद पूरी करने के लिए पीर फकीर से दुआ करते हैं। यह तो एक मोटा अन्ध विश्वास है, और भी अनेक जालों में फंसे हुये हैं। तान्त्रिक अपना चमत्कार दिखाकर इनकी मान मर्यादा, धन लूट लेता है। ये भोला हिन्दू बाजार में तो चतुराई से सौदा खरीदता है परन्तु भेड़ चाल में फंस कर अन्धा हो जाता है। वहाँ बुद्धि का प्रयोग नही करता।

**देवराज आर्य मित्र**
**नई दिल्ली**

**********

thearyasamaj.org



# ऐसे 'अकबर' जलालुद्दीन को कितना सम्मान दें ?

## महाजल्लाद या महान्

● आचार्य आर्यनरेश

जिस अबकर के राज्य में 5 लाख हिन्दुओं का कत्ल हुआ। रानी दुर्गावती को न पाकर उसकी बहन को उठाकर हरम में रखा ऐसी अनेक शादियाँ की। मुसलमान न बनने पर कत्ल किए – प्रमाण तारीख इ. सलीम शाही पृ० 225–26

**बच्चों की पुस्तकों से लेकर धार्मिक कथावाचकों और लेखकों तक किसी ने अब तक 'सत्य' को जानने का पूर्ण प्रयास नहीं किया !**

कांग्रेस ईसाई ए.ओ. ह्यूम, मुस्लिम लीग व कॉमनिस्टों की झूठी संयुक्त नीति सरकार के शिक्षा विभाग का आदेश सूचना संख्या S.Y.L. 89; Dt. 28.04.1989 :- मन्दिरों को तोड़ने अथवा हमलावर व शासक मुसलमानों द्वारा आर्यावर्त भारत पर किए गए किसी भी अत्याचार का विवरण भारत के विद्यालयों की पाठ्य पुस्तकों एवं सामाजिक पत्रिकाओं में नहीं छपना चाहिए। कांग्रेस व कम्युनिस्ट आदि सभी पार्टियां भारत में तीव्र गति से बढ़ रही मुस्लिम वोट के सहयोग से ही प्रायः चुनाव जीतती हैं अतः जिनके सहयोग से जीतना है उन्हें आर्य खालसा हिन्दुओं पर किए गए अत्याचारों की बदनामी से बचाना है। ये पार्टियां भले ही सच्चाई पर कितने ही पर्दे डालें परन्तु देश के प्रायः सभी बुद्धिजीवी जानते हैं कि मुहम्मद बिन कासिम से लेकर बाबर तक व बाबर से लेकर टीपू सुलतान तक, औरंगजेब, तैमूरलंग, अकबर सहित किसी भी मुगल वा मुसलमान हमलावर अथवा शासक के अत्याचारों से भलीभांति परिचित हैं कि इन लोगों ने मुस्लिम न बनने पर कुरआन 8:15–17, 9.5,111 के अनुसार आर्यखालसा हिन्दुओं को गर्दनें काट–काट कर मीनारें बनाईं। लाखों माताओं–बहनों से बलात्कार किए, उन्हें शक्ति से मुस्लिम बनाया, लाखों हिन्दुओं को गुलाम बना कर बेचा। मन्दिरों को तोड़ मस्जिदे बनाईं। दिल्ली की जामा मस्जिद 125 मन्दिरों को तोड़कर उनके सामान से बनी। मन्दिरों से खरबों का हीरा–मोती सोना लूटा। श्रीराम, श्रीकाशी विश्वनाथ, सोमनाथ और कृष्ण मन्दिरों को तोड़कर मस्जिदें बनाईं। अकबर भी घायल हेमू का सर काट कर गाज़ी बना था। A & D Pt III क्योंकि वह मुसलमान नहीं बना था। एलियट डाउसन पृ० 65–66 जलालुद्दीन अकबर एक पक्का कुरानिक मुसलमान था। उस ने कूटनीति से अनेक हिन्दू राजाओं की बेटियों को अपनी औरत बनाया। पहले वह उनके भाइयों का सताता, तड़पाता, पकड़ता तथा जान से मारने की धमकी देता। उन्हें ब्लैकमेल करता पश्चात् कहता कि यदि आप अपने बेटों का जीवन सुरक्षित चाहते हो तो हमें अपनी बेटी से निकाह करने दो। वह महान् (ग्रेट = अकबर) नहीं था अपितु एक महानीच चरित्रहीन व्यक्ति था। प्रमाण के लिए आप आगरा के लाल किला में लगा भारत सरकार के पुरातत्व विभाग का नीला बोर्ड देखें। उस पर लिखा है कि वहां वह अपनी दुष्ट वासना को शान्त करने हेतु पाँच हजार औरतें विषय भोग हेतु रखता था। उसके जीवन में घंटों मीनाबाजार लगाकर बुर्का पहन कर पहले वहाँ सुन्दर औरतों को छांटना, पुनः वहाँ उसका चरित्रहरण करने हेतु अपने सहयोगियों द्वारा धोखे से पकड़ कर जलालुद्दीन के हरम में पहुँचाना। जब किरणमयी आर्य वीराङ्गना को इसी तरह से पकड़ कर ले जाया गया तो वह अपनी कटार लेकर उस की छाती पर चढ़ गई। यदि वह दुष्ट पर दयालुता करने की भूल न करती तो बहुत सी नारियों का पश्चात् शील–भंग होने से बच जाता। इतिहास साक्षी है कि वह न तो धार्मिक था, न चरित्रवान न दयालु। उसका दीन कुरआन था जिसमें स्पष्ट रूप से अल्लाह, कुरआन और मुहम्मद पर विश्वास न करने वालों को जिन्दा जलाने (गोदरा में पचास हिन्दुओं की तरह), गरदनें काटने, उनका धन और औरतों को लुटने का आदेश दिया है। इसी लिए उसने अपनी हवस पूर्ति हेतु 5000 औरतों को बेड़ियों में जकड़ रखा था। उसकी हिन्दुओं के प्रति दयालुता की पोल चित्तौड़ की लड़ाई से खुलती है। अकबर नामा–अबुल फज़ल, जिहादी अकबर–फतहनामा चित्तौड़ 1568 में लिखा है कि मन्दिरों को तोड़ते हुए अकबर ने चित्तौड़ का हिन्दू किला जीतने एवं सुन्दर हिन्दू नारियों को लूटने हेतु जब वहां युद्ध किया, तो उस युद्ध को देखने हेतु बिना किसी हथियार के आस–पास खड़े लगभग 40 हजार कृषक–हिन्दुओं को मौत के घाट उतार दिया। शर्म की बात है कि नेहरू ने इसे D. O. INDIA में महान् कहा।

बीरबल एक बुद्धिजीवी धार्मिक व्यक्ति था परन्तु मजबूरी से उसके साथ था। यदि हम बीरबल की बुद्धिमता को प्रकट करना चाहते हैं तो इस बात का ध्यान रखें कि अकबर के हिन्दुओं के प्रति दयालु, धार्मिक, देशभक्त वा चरित्रवान अथवा महान् व्यक्ति होने का डंका पीटकर सच्चे इतिहास को झुठलाएं नहीं एवं एक महानीच कुकर्मी कातिल को महिमा मण्डित न करें। हमने यदि बच्चों अथवा कथा में आए श्रोताओं को प्रभावित ही करना है तो उसे चाणक्य, विदुर, शिवाजी तथा पन्चतन्त्र व हितोपदेश की कथाएं सुनाएं, एवं पाठ्यक्रम में रखें। यदि बीरबल को सुनाएें तो वहां अकबर को धर्म के प्रति मूर्ख, क्रूर व चरित्रहीन दर्शायें।

उद्गीथ स्थली हिमाचल

☞ *पृष्ठ 7 का शेष*

# उत्कृष्ट शंका–समाधान

बैकग्राउण्ड नहीं है। अगर आपने पहले से कुछ स्वाध्याय किया है, आपका कुछ पूर्वचिन्तन है, तो हो सकता है कि बात आज ही आज आपको समझ में आ जाए। अगर स्वाध्याय कम है तो हो सकता है कि आज समझ में नहीं आए।

आज आप उस बात को सुनें, उस पर विचार करें, लेकिन फिर भी समझ में नहीं आए। हो सकता है कि एक हफ्ते में समझ में आ जाए। समझने में अधिक समय भी लग सकता है। दो हफ्ते, पन्द्रह दिन, एक माह, दो माह, छह माह भी लग सकते हैं। कोई–कोई बात ज्यादा कठिन होती है कि, वो छह महीने में भी समझ में नहीं आती। ऐसी कठिन–कठिन बातें भी होती हैं, जिनको समझने में कई–कई वर्ष लग जाते हैं। कुछ बातें दिमाग में कई वर्षों के बाद बैठती हैं।

बात समझ में नहीं आयी, तो कोई चिंता की बात नहीं है। झगड़ा नहीं करना, यह नहीं कहना कि आपका उत्तर गलत है। यह कहना ठीक है कि – ''आपने उत्तर दिया, मगर वा हमारी समझ में नहीं आया। इस पर हम और सोचेंगे, विचार करेंगे, पढ़ेंगे, अध्ययन करेंगे। धीरे–धीरे समझ में आएगा।'' एक उदाहरण दे रहा हूँ। प्रश्न है – संसार में व्यक्ति को सम्मान की इच्छा करनी चाहिए या अपमान की इच्छा करनी चाहिए? प्रायः सबका उत्तर यही होगा कि सम्मान की इच्छा करनी चाहिए। यह उत्तर गलत है। सही उत्तर है – अपमान की इच्छा (आध्यात्मिक व्यक्ति को) करनी चाहिए। दरअसल, यह बात आपकी समझ में आज तो नहीं बैठेगी। इसको दिमाग में बैठाने के लिए कई साल चाहिए। कई साल तपस्या करनी पड़ेगी, तब यह बात समझ में आएगी कि अपमान की इच्छा करनी चाहिए। यह मेरे अपने घर बात नहीं है। यह महर्षि मनु जी की बात है। मनुस्मृति में कहा है –

**सम्मानाद् ब्राह्मणो नित्यमुद्विजेत विषादिव।**
**अमृतस्येव चाकाङ्क्षेदवमानस्य सर्वदा ।।**

''ब्राह्मण, योगाभ्यासी सम्मान से ऐसे डरता रहे, जैसे व्यक्ति विष से डरता है। जैसे जहर से डर लगता है, ऐसे ही व्यक्ति को सम्मान से डरना चाहिए। अपमान की इच्छा ऐसे करनी चाहिए, जैसे व्यक्ति अमृत की इच्छा करता है।'' यह बात समझने में बड़ी कठिन है।

ऐसी ही और भी बहुत सी बातें होंगी जो आपको आज समझ में न आएं, तो इसमें चिन्ता की कोई बात नहीं है। वो बातें सच्ची हैं, प्रामाणिक हैं। धीरे–धीरे समझ में आएंगी। कुछ सरल बातें होती हैं, कुछ कठिन बातें होती हैं। सरल बातें जल्दी समझ में आ जाती हैं, कठिन बातों को समझनें में समय लगता है। यही सिद्धांत है।

'शंका–समाधान' का एक नियम यह है कि प्रश्न पूछने वाला व्यक्ति शंका के रूप में अपनी बात रखे कि – ''यह बात हमारी समझ में नहीं आयी। कृपया हमको समझाइए।'' इस तरह से बात नहीं रखें कि – ''मैं ऐसा–ऐसा मानता हूँ।'' इसका मतलब यह कि आपने तो अपने पक्ष की स्थापना कर दी, यह तो 'शंका–समाधान' नहीं रहा। इसका नाम है – 'शास्त्रार्थ'।

जब आप अपने पक्ष की स्थापना करते हैं कि ''मैं ऐसा मानता हूँ'', तो फिर यह शास्त्रार्थ हो गया। आप ऐसा मानते हो और मैं ऐसा मानता हूँ, तो फिर दोनों के विचारों में टक्कर है। यहाँ टक्कर नहीं करनी है।

अगर किसी को टक्कर करने का शौक है, तो अलग से बैठकर करेंगे। मैं टकराने के लिए भी तैयार हूँ, डरता नहीं हूँ। पर इस समय टकराने का काम नहीं है। इस समय तो 'शंका–समाधान' का काम है। इसी उद्देश्य से हम इस कार्यक्रम को चलाएंगे। इस प्रकार इन नियमों का पालन करें। आपको बहुत लाभ होगा।

क्रमशः

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
आ... अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 16-17 /04/2014
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39/57

# डी.ए.वी. रादौर में हुआ ऋषि दयानन्द का गुणगान

रादौर (यमुनानगर) के डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल में महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्मदिवस बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस अवसर पर हवन यज्ञ का आयोजन विद्यालय के प्राचार्य श्री रमन शर्मा के निर्देशन में हुआ। इस अवसर पर सभी छात्रों व अध्यापकों ने यज्ञाहुति डाली। अध्यापिका सुशीला जौली ने सभी को महर्षि जी की जीवनी से अवगत करवाया तथा उनकी महिमा व वेदों का सार बताते हुए उनके आदर्शों पर चलने की प्रेरणा दी। विद्यालय के धर्म शिक्षक अमित कुमार शास्त्री जी ने स्त्री शिक्षा व दलितोद्वार के बारे में बताते हुए कहा कि स्वामी दयानन्द जी ने ही स्त्रियों व शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार दिलाया था स्त्री वर्ग को उनका आभारी होना चाहिए।

प्रधानाचार्य श्री रमन शर्मा ने कहा कि महर्षि दयानन्द एक सच्चे संन्यासी थे, जिन्होंने अपना पूरा जीवन समाज के लिए अर्पण कर दिया। उन्होंने गुलाम भारत को आजाद करवाने के लिए अपना पूर्ण सहयोग दिया, इनकी प्रेरणा से ही गाँधी जी ने दलितोद्वार किया। भारत में फैली कुरीतियों व अन्धविश्वास को दूर करने के लिए देश वासियों को जागृत किया। स्वामी दयानन्द ने ही हिन्दी भाषा को राष्ट्र भाषा बनाने पर जोर दिया। स्वामी दयानन्द द्वारा देशहित के लिए किए गए कार्यों को कभी भुलाया नहीं जा सकता, देशहित में उनका योगदान अतुलनीय है। युवाओं को उनके जीवन से प्रेरणा पाकर देश हित मे कार्य करने चाहिएँ।

# डी.ए.वी. कॉलेज, काँगड़ा में हुआ विशेष व्याख्यान का आयोजन

एम.सी.एम.डी.ए.वी.महाविद्यालय, कांगड़ा के प्रांगण में प्राचार्य डॉ. वीरेन्द्र भाटिया की अध्यक्षता में अर्थशास्त्र विभाग के अध्यक्ष डॉ. प्रदीप द्वारा विशेष व्याख्यान का आयोजन करवाया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि डॉ. बी.एन. सिंह, डायरैक्टर, यू.पी आर.टी ओपन विश्वविद्यालय इलाहाबाद मुख्यातिथि के रूप में विद्यमान थे। डॉ. सिंह ने ''विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत भारतीय अर्थव्यवस्था के स्वरूप'' पर विचार व्यक्त किए। डॉ. प्रदीप ने मुख्यातिथि का स्वागत किया। प्रो.एस. के मित्तल ने महाविद्यालय की गतिविधियों के बारे में अवगत करवाया। अन्त में प्राचार्य डॉ. वीरेन्द्र भाटिया ने मुख्य अतिथि का धन्यवाद करते हुए योजनाओं की रूपरेखा पर अपने विचारों से विद्यार्थियों को प्रेरित किया। इस अवसर पर प्रो. राखी ने मंच का संचालन किया। इस शुभ अवसर पर श्री सी. के.सैनी, श्री अवकाश, प्रो. कपिल, प्रो. अजय, प्रो. नेहा, प्रो सीमा भी उपस्थित रहे।।

# डी.ए.वी. कॉलेज फिल्लौर में समारोह का आयोजन

डी.आर.वी., डी.ए.वी. कालेज फिल्लौर में स्वामी दयानन्द जी के जन्म दिवस पर एक समारोह का आयोजन किया जिसमें लगभग 10 विद्यार्थियों ने स्वामी जी के जीवन से सम्बन्धित व्याख्यान प्रस्तुत किये। इस समारोह का मुख्य उद्देश्य था स्वामी जी के समाज के प्रति उन के योगदान को याद करना व वैदिक संस्कृति की जानकारी देना। बच्चों ने स्वामी दयानन्द जी द्वारा समाज के लिए किये गये क्रिया कलापों का बहुत सुन्दर चित्रण किया। नेहा ने समाज के प्रति उन के योगदान का वर्णन किया तो मनीषा ने 'गरु की खोज', कविता के माध्यम से स्वामी जी के द्वारा जीवन में 'गुरु की खोज' के लिए किये गये संघर्ष का वर्णन किया। सभी के व्याख्यान सराहनीय थे। अन्त में कालेज के प्रधानाचार्य डॉ. एस.के महाजन ने वहाँ उपस्थित सभी विद्यार्थियों एवं अध्यापक वर्ग को सम्बोधित करते हुए कहा कि हमें स्वामी दयानन्द जी के जीवन से प्रेरणा लेकर उन के द्वारा स्थापित नियमों का पालन करना चाहिए।

# विचार टी.वी. पर वेद प्रचार

विचार टी.वी. द्वारा निर्मित वैदिक कार्यक्रमों का पिछले डेढ़ वर्ष से साप्ताहिक प्रसारण आस्था चैनल पर प्रत्येक शनिवार रात्रि 9.30 बजे से एवं पिछले छः मास से दैनिक प्रसारण आस्था भजन चैनल पर हर रोज रात्रि 8.00 बजे से हो रहा है।

हाल ही में विचार टी.वी. द्वारा आर्य जगत् की सर्वप्रथम परिचर्चा (Talk Show) ''विचार मंथन'' का निर्माण किया गया है जिसमें ईश्वर का सच्चा स्वरूप, ईश्वर की उपासना पद्धति, ईश्वर को मानने से लाभ आदि विषयों को रोचक ढंग से मुख्य सूत्रधार श्रीमती रेणु अग्रवाल एवं श्री आचार्य ज्ञानेश्वरजी के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

इस परिचर्चा का विशेष प्रसारण सुप्रसिद्ध आस्था चैनल पर प्रत्येक शनिवार रात्रि 9.30 बजे से एवं इसका पुनः प्रसारण आस्था भजन चैनल पर प्रत्येक रविवार रात्रि 8.00 बजे से होगा।

सभी आर्य बंधुओं से अनुरोध इसका लाभ लेवें एवं अपनी प्रतिक्रिया विचार को info@vichaar.tv ज़रूर लिख भेजें।

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन,** सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**